दीपक बारा नाम का

महल भया उजियार

पहला प्रश्न: भगवान, "दीपक बारा नाम का', संत पलटू के इस सूत्र से आज एक नयी प्रवचन माला शुरू हो रही है। कृपया समझाएं कि यह नाम का दीपक क्या है और संत पलटू किस नाम का जिक्र कर रहे हैं?

चैतन्य कीर्ति!

पूरा सूत्र इस प्रकार है--

पलटू अंधियारी मिटी, बाती दीन्हीं बार।
दीपक बारा नाम का, महल भया उजियार।।

मनुष्य जन्मता तो है, लेकिन जन्म के साथ जीवन नहीं मिलता। और जो जन्म को ही जीवन समझ लेते हैं, वे जीवन से चूक जाते हैं। जन्म केवल अवसर है जीवन को पाने का। बीज है, फूल नहीं। संभावना है, सत्य नहीं। एक अवसर है, चाहो तो जीवन मिल सकता है; न चाहो, तो खो जाएगा। प्रतिपल खोता ही है। जन्म एक पहलू, मृत्यु दूसरा पहलू। जीवन इन दोनों के पार है। जिसने जीवन को जाना, उसने यह भी जाना कि न तो कोई जन्म है और न कोई मृत्यु है।

साधारणतः लोग सोचते हैं, जीवन जन्म और मृत्यु के बीच जो है उसका नाम है। नहीं जीवन उसका नाम है जिसके मध्य में जन्म और मृत्यु बहुत बार घट चुके हैं, बहुत बार घटते रहेंगे। तब तक घटते रहेंगे जब तक तुम जीवन को पहचान न लो। जिस दिन पहचाना, जिस दिन प्रकाश हुआ, जिस दिन भीतर का दीया जला, जिस दिन अपने से मुलाकात हुई, फिर उसके बाद न कोई लौटना है, न कहीं आना, न कहीं जाना। फिर विराट से सम्मिलन है।

बीज सुबह की धूप में भी पड़ा हो तो भी अंधकार में होता है। क्योंकि बीज तो बंद होता है। उसके भीतर तो सूरज की किरणें पहुंचती नहीं। हां, बीज में फूल छिपे हैं--अनंत फूल छिपे हैं। काश, बीज के फूल पकड़ हो जाएं तो फिर सूरज की रोशनी से संबंध जुड़ जाता है। फिर फूल नाचते हैं धूप में, हवाओं में, वर्षा में; गाते हैं पक्षियों के साथ, गुफ्तगू करते हैं सितारों से। साधारण मनुष्य बीज की तरह है, बंद इसलिए अंधेरा है भीतर। खुलो तो उजियारा हो जाए। यह सूत्र प्यारा है--

पलटू अंधियारी मिटी, बाती दीन्हीं बार।
दीपक बारा नाम का, महल भया उजियार।।

वह महल तुम हो। कहीं और मत तलाशने निकल जाना। जो भी पाना है, भीतर पाना है। जो भी है जानने योग्य, पाने योग्य, वह तुम्हारे भीतर छिपा पड़ा है। उसे तलाशना है। वह

उपलब्धि नहीं है, आविष्कार है। तुम्हारे भीतर कुछ पर्तें हैं, जो टूट जाएं तो जलधार बह निकले। जैसे दीये को किसी ने ढांक दिया हो, ऐसे तुम ढंके हो।

उपनिषद के ऋषि प्रार्थना करते हैं: है प्रभु, इस स्वर्णपात्र को उघाड़ दे! यह पात्र है। और यही खतरा है। मिट्टी का होता, तो तुम लात मार देते। मगर यह सोने का है, इसे पकड़ रखने की आकांक्षा होती है। कैदी को अगर सोने की जंजीरें पहना दो, तो वह ही नहीं चाहेगा कि जंजीरें टूटें। वह तो समझेगा, आभूषण हैं। और अगर हीरे-जवाहरात भी जड़ दो जंजीरों पर, तो फिर तो कहना क्या! फिर तो जो उसकी जंजीरें तोड़ने आएगा, उसका दुश्मन हो जाएगा।

जीसस को तुमने सूली लगायी इसीलिए कि तुम्हारी सोने, हीरे-जवाहरातों से जड़ी जंजीरों को तोड़ने के लिए यह आदमी तुम्हारे पीछे पड़ गया। इसे सजा देनी ही होगी। इसे क्षमा नहीं किया जा सकता। तुमने सुकरात को जहर पिलाया, यूं ही नहीं । इसने जिद ही कर ली कि तुम्हें जगा कर रहेगा। तुमने बुद्धों को पत्थर मारे, पागल हाथी छोड़े। तुमने किस तरह सताया है उनको जिनकी एकमात्र अभीप्सा थी कि तुम्हारे जीवन का अंधकार टूट जाए; जो तुम्हारे लिए जी रहे थे, क्योंकि जिनके अपने जीवन का कार्य तो पूरा हो चुका था; जो तुम्हारे लिए, सिर्फ तुम्हारे लिए शरीर में आबद्ध थे--उनका फूल तो खिल चुका था, अब उन्हें यहां यह क्षण भी और होने की जरूरत थी; जो तुम्हारे लिए बोल रहे थे--क्योंकि उनके भीतर तो मौन अवतरित हो गया था, उन्होंने तो शून्य का संगीत सुन लिया था, अब शब्दों से क्या लेना था; जो तुम्हारे लिए हर तरह की तकलीफ उठा रहे थे! तुमने उन्हें खूब पुरस्कार दिया! तुमने उनकी मुहब्बत का खूब सिला दिया!

मुट्ठियों में खाक लेकर दोस्त आए बादफ्न
जिंदगी भर की मुहब्बत का सिला देने लगे
क्या सिला देते हैं हम! जिंदगी भर की मुहब्बत--
और किसी के मुंह से यह भी न निकला
कि इन पे खाक न डालो
और किसी के मुंह से यह भी न निकला मेरे दफ्न के वक्त--
कि इन पे खाक न डालो
इन्होंने आज ही बदले हैं कपड़े
आज ही हैं ये नहाए हुए

आखिरी विदा हम देते हैं, मुट्ठियों में खाक लेकर कब्र पर डाल देते हैं।

जिंदगी भर का सिला देने लगे

क्या सिला दिया! खूब सिला दिया! लेकिन कम से कम मर जाता है कोई तब तुम यह पुरस्कार देते हो, मगर तुम जीसस और सुकरात और मंसूर के लिए इतना भ।भृीधक्रीीि।भृीध!षिक्रष्ष्क्रिधएन्एस्ज्म

तैयारी रखनी है, सरमद होने की...गरदन कट सकती है! संन्यास एक अभियान है, एक अभीप्सा है इस देश को--और इस देश को ही नहीं, इस देश के माध्यम से सारे जगत को पुनरुज्जीवन देने की। कच्छ भी हमारा है, केलिफोर्निया भी हमारा है; पंजाब भी हमारा है, और पाकिस्तान भी हमारा है--सारी पृथ्वी हमारी है। इसलिए, सुरेन्द्र, जगाना तो सबको है! मगर मुझे कहीं एक जगह तो बैठना होगा लेकिन वहीं से किरणें फैलायी जा सकती हैं। सूरज को हर घर पर जाने की जरूरत भी नहीं है।

आज इतना ही।

८ अक्तूबर १९८०; श्री रजनीश आश्रम, पूना

सतां हि सत्य

पहला प्रश्नः भगवान,
सत्यं परं परं सत्य।
सत्येन न स्वर्गाल्लोकाच च्यवन्ते कदाचन।
सतां हि सत्य।
तस्मात्सत्ये रमन्ते।
अर्थात सत्य परम है, सर्वोत्कृष्ट है, और जो परम है वह सत्य है। जो सत्य का आश्रय लेते हैं वे स्वर्ग से, आत्मोकर्ष की स्थिति से च्युत नहीं होते। सत्पुरुषों का स्वरूप ही सत्य है। इसलिए वे सदा सत्य में ही रमण करते हैं।
भगवान, श्वेताश्वतर उपनिषद के इस सूत्र को हमारे लिए विशद रूप से खोलने की अनुकंपा करें।

चैतन्य कीर्ति
सत्यं परम परम सत्य।
परम का अर्थ सर्वोत्कृष्ट नहीं होता। वैसा भाषांतर भूल भरा है। सर्वोत्कृष्ट तो उसी शृंखला का हिस्सा है। सीढ़ी का आखिरी हिस्सा कहो, मगर सीढ़ी वही है। पहला पायदान भी सीढ़ी का है और सबसे ऊंचा पायदान भी सीढ़ी का है। सर्वोत्कृष्ट में गुणात्मक भेद नहीं होता, केवल परिमाणात्मक भेद होता है। परम का अर्थ सर्वोत्कृष्ट नहीं है।
परम का अर्थ हैः जो शृंखलाओं और श्रेणियों का अतिक्रमण कर जाए। जिसे किसी श्रेणी में और किसी कोटि में रखने की संभावना न हो। जो स्वरूपतः अनिर्वचनीय है। जिसके संबंध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। जिसके संबंध में कुछ भी कहो तो भूल हो जाएगी।

लाओत्सू का प्रसिद्ध वचन है: सत्य को बोला कि बोलते ही सत्य असत्य हो जाता है। बोलते ही। क्योंकि सत्य है विराट आकाश जैसा और शब्द बहुत छोटे हैं, आंगन से भी बहुत छोटे हैं, शब्दों में सत्य का आकाश कैसे समाए?

और हमारी कोटियां हमारे मन के ही विभाजन हैं। इसे कहते पदार्थ, इसे कहते चेतना, लेकिन कौन करता है निर्णय? कौन करता है भेद? भेद करने की प्रक्रिया तो मन की है। और सत्य है मनातीत, मन के पार। इसलिए सत्य को मन की किसी कोटि में नहीं रखा जा सकता। सर्वोत्कृष्ट कहने की भूल में मत पड़ जाना। सबसे ऊंचा भी हो तो भी नीचे से ही जुड़ा होगा। वृक्ष कितना ही आकाश में ऊपर उठ जाए, तो भी उन्हीं जड़ों से जुड?ा होगा जो गहरी जमीन में चली गयी हैं।

फ्रेड्रिक नीत्शे का प्रसिद्ध वचन है कि अगर किसी वृक्ष को आकाश के तारे छूने हों, तो उसे अपनी जड़े पाताल तक भेजनी होंगी। और वृक्ष एक है। पाताल तक गयी जड़े, स्वर्ग को छूती हुई शाखाएं अलग-अलग नहीं हैं; एक ही जीवनधारा दोनों को जोड़े है। तुम्हारे पैर और तुम्हारा सिर अलग-अलग नहीं हैं। यह अलग-अलग होने की भ्रांति ने बड़े पागलपन पैदा कर दिया।

मनुस्मृति कहती है: ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से पैदा हुए। क्यों? क्योंकि मुख सर्वोत्कृष्ट। और शूद्र ब्रह्मा के पैरों से पैदा हुए। क्योंकि पैर अत्यंत निकृष्ट। वैश्य जंघाओं से पैदा हुए। शूद्रों से जरा ऊपर! मगर फिर भी निम्न का ही अंग। क्योंकि आदमी को दो हिस्सों में बांट दिया। कमर के ऊपर जो है, श्रेष्ठ और कमर के नीचे जो है, अश्रेष्ठ। कैसा मजा है! एक ही रक्त की धार बहती है, कहीं कोई विभाजन नहीं है, हड्डियां वही हैं, मांस वही है, रक्त वही है, सब जुड़ा हुआ है, सब संयुक्त है, लेकिन इसमें भी विभाजन कर दिया। फिर क्षत्रिय हैं, वे बाहुओं से पैदा हुए। और थोड़ा ऊपर। और फिर ब्राह्मण है, वह मुख से पैदा हुआ।

लेकिन शूद्र हो या ब्राह्मण, अगर पैर और मुंह से ही जुड़े हैं, तो उनमें कुछ गुणात्मक भेद नहीं है। गुणात्मक भेद हो नहीं सकता। क्योंकि वे एक शरीर के अंग हैं।

मेरी परिभाषा में तो सभी व्यक्ति शूद्र की तरह पैदा होते हैं। और जो व्यक्ति मन की सारी शृंखलाओं के पार चला जाता है, जो उस अज्ञात और अज्ञेय में प्रवेश कर जाता है जिसे कहने के लिए न कोई शब्द है, न कोई सिद्धांत, जिसे कहने का कोई उपाय नहीं, जिसे जानने वाला गूंगा हो जाता है, गूंगे का गुड़ है जो, वही ब्राह्मण है। ब्राह्मण वह है: जिसने ब्रह्म को जाना। जिसने जीवन के परम सत्य को जाना, वह ब्राह्मण है। पैदा सभी शूद्र होते हैं। फिर कोई ध्यान की प्रक्रिया से समाधि तक पहुंच कर, मन के पार होकर ब्राह्मण हो जाता है। ब्राह्मण होना उपलब्धि है। जन्म से कोई ब्राह्मण नहीं होता है।

यह सूत्र प्यारा है:

सत्यं परम...

सत्य परम है। मगर फिर याद दिला दूं, तुमने परम का अर्थ किया है: सर्वोत्कृष्ट। नहीं, वह तो अहंकार की ही भाषा है। सर्वोत्कृष्ट! सबसे ऊपर। तो जो सबसे ऊपर है, वह किसी को नीचे दबाएगा, वह किसी की छाती पर चढ़ेगा।

मैं कल ही श्री मोरारजी देसाई का एक वक्तव्य देख रहा था। किसी ने उनसे पूछा एक पत्रकार सम्मेलन में कि यदि लोग आपसे कहें पुनः प्रधानमंत्री हो जाने के लिए, तो आप राजी होंगे? उन्होंने कहा, निश्चय ही! प्रधानमंत्री तो क्या, अगर लोग मुझसे गधे पर बैठने को कहें तो भी राजी हो जाऊंगा। मैं थोड़ा सोच-विचार में पड़ गया। लोग कौन हैं? पहले गधे से भी तो पूछो! गधा भी इनको बिठालने को राजी होगा!

और तब मुझे याद आया--

सेठ चंदूलाल का बेटा उनसे पूछ रहा था, पापा, दूल्हा को लोग घोड़े पर क्यों बिठालते हैं, गधे पर क्यों नहीं बिठालते? तो चंदूलाल ने कहा, बेटा, घोड़े पर इसलिए बिठालते हैं ताकि पता चलता रहे कौन दूल्हा है और कौन घोड़ा है। गधे पर बिठाल दें तो कैसे पता चलेगा कौन दूल्हा है, कौन गधा है? वरमाला किसके गले में पहनाएगी? वधू बड़ी मुश्किल में पड़ जाएगी, किंकर्तव्यविमूढ हो जाएगी, एक गधे पर दूसरा गधा चढ़ा बैठा है! इसलिए घोड़े पर बिठालते हैं।

ये मोरारजी देसाई गधे पर बैठने को राजी है। मगर कोई गधा उनको बिठालने को राजी है? और लोग कौन हैं, जो इनको कहें कि तुम गधे पर बैठ जाओ। गधे का हक सिर्फ गधे को है। मगर कोई गधा इतना गधा नहीं है कि इनको बैठालने को राजी हो जाए। मगर आतुरता है किसी के ऊपर बैठने की! चलो, गधा ही सही, मगर ऊपर बैठ जाएं!

ऊपर बैठने की जो आकांक्षा है, वह अहंकार है। सत्य और अहंकार का कोई संबंध नहीं जहां अहंकार गिर जाता है, वहां सत्य है। जब तक तुम हो, तब तक सत्य नहीं। जब तुम नहीं हो, तब सत्य है। तुम्हारी शून्यता की सुगंध सत्य है। तुम्हारी राख पर खिलता है फूल सत्य का। तुम खाद बन जाते हो। तब, केवल तब ही सत्य की अनुभूति शुरू होती है। जब तक तुम हो, तब तक सत्य के संबंध में विचार कर सकते हो, लेकिन सत्य को न जाने पाओगे। और सत्य के संबंध में कितना ही जानो, वह सत्य को जानना नहीं है। कोई लाख जान ले प्रेम के संबंध में अगर प्रेम का नाद उसके प्राणों में न छिड़ा हो, तो सारे शास्त्र पढ़ डाले प्रेम के संबंध में, फिर भी प्रेम से वंचित ही रह जाएगा। कोई प्रकाश के संबंध में सब पढ़ा ले, सब गुन ले, मगर अगर आंखें न हों उसके पास, या आंखें भी हों और बंद हों, तो प्रकाश को न जान सकेगा। इस भेद को ख्याल में रखना, प्रकाश को जानना और प्रकाश के संबंध में जानना दो अलग बातें हैं। प्रकाश के संबंध में जानना दर्शनशास्त्र है और प्रकाश को जानना: धर्म।

सत्य के संबंध में जाना जा सकता है। बहुत जाना जा सकता है। सारे विश्व के पुस्तकालय भरे पड़े हैं, पटे पड़े हैं। मगर वह सत्य को जानने की व्यवस्था नहीं है। सत्य को जानने की प्रक्रिया तो ठीक उलटी है। सब कोटियां तोड़ देनी होंगी, सब शृंखलाएं विसर्जित कर देनी

होंगी, सारी धारणाओं को नमस्कार कर लेना होगा--आखिरी नमस्कार! हिंदू की धारणा, मुसलमान की, ईसाई की, जैन की बौद्ध की, सिक्ख की, पारसी की, सारी धारणाओं को विदा कर देना होगा। क्योंकि जब तक तुम्हारी धारणाएं हैं, जब तक तुम्हारे पक्षपात हैं, जब तक तुम मान कर चल रहे हो, तब तक तुम उसे न जाने सकोगे जो है। तुम्हारी मान्यता उस पर आरोपित हो जाएगी। तुम्हारी आंखों पर चश्मा लगा है तो उसको रंग तुम्हें भ्रांति देगा क्योंकि उसका रंग तुम्हारे चारों तरफ हावी हो जाएगा। और क्या है हिंदू होना और मुसलमान होना और जैन होना? चश्मे हैं। अलग-अलग रंग के। और जिस रंग से तुम देखोगे, वही रंग सारे अस्तित्व का दिखाई पड़ने लगेगा।

अस्तित्व को देखना हो तो चश्मे उतार देना जरूरी है। शास्त्री के बोझ से मुक्त हो जाना जरूरी है। और जब तुम्हारे भीतर कोई भी ज्ञान नहीं रह जाता तब निर्दोषता का जन्म होता है। तब तुम्हारे भीतर वही हृदय होता है, जो तुम बच्चे की तरह लेकर आए थे। वही सरलता, वही जिज्ञासा, वही जानने की आतुरता।

पंडित में जानने की आतुरता नहीं होती। वह तो जाने ही बैठा है!

एक मित्र ने प्रश्न पूछा है...प्रमोद उनका नाम है...कि आपको समझना इतना कठिन क्यों है? मुझे समझना कठिन नहीं है, मैं तो बहुत सीधी-सादी भाषा बोल रहा हूं, लेकिन वह जो प्रमोद के साथ "पंडित' जुडा है उस "पंडित' ने उपद्रव कर दिया है। वह "पंडित' नहीं समझने देगा। पांडित्य ने कभी किसी को नहीं समझने दिया। जीसस को सूली पर चढ़ाया? पंडितों ने। यहूदी धर्म के पंडित थे। किसने मंसूर के हाथ-पैर काटे, गर्दन काटी? मुसलमान पंडितों ने। मौलवियों ने, इमामों ने, अयातुल्लाओं ने। वे उनके पंडित थे। मंसूर से चूक गये, जीसस से चूक गये। बुद्ध को किसने इनकार किया इस देश में इस? देश से कैसे बुद्ध की अदभुत सुगंध तिरोहित हो गयी? पंडितों का जाल! उनके बर्दाश्त के बाहर हो गया।

और कारण है उनके बर्दाश्त के बाहर होने का। पंडित का एक स्वार्थ है, बहुत गहरा स्वार्थ है। उसका ज्ञान खतरे में है। अगर वह बुद्धों की सुने, तो उसे पहली तो बात यह करनी होगी कि ज्ञानी को छोड़ने का साहस, जुटाना होगा। और ज्ञान को छोड़ना ये है जैसे कि कोई उससे प्राण छोड़ने को कह रहा हो। वही तो उसी संपदा है। वही उसकी धरोहर है। उसी के बल पर तो उसके अहंकार में सजावट है, शृंगार है। वही तो उसका आभूषण है। वही तो है उसके पास, और तो कुछ भी नहीं है। वह शास्त्रों का बोझ ही तो उसे भ्रम दे रहा है--जानने का।

लेकिन जानना बड़ी और बात है, जानने का भ्रम और।

अज्ञान से आदमी नहीं भटकता इतना, जीना जानने के भ्रम से भटक जाता है। क्योंकि अज्ञानी कम से कम इतना तो अनुभव करता है कि मुझे पता नहीं। इतनी तो उसमें प्रामाणिकता होती है कि मुझे पता नहीं। लेकिन पंडित में यह प्रामाणिकता भी नहीं होती। पता तो नहीं है, मगर उसे ख्याल होता है मुझे पता है। उसने बिना जाने मान लिया है कि जान लिया। अब कैसे जानेगा? उसके जानने की दीवार बीच में खड़ी हो गयी। ज्ञान से नहीं

जाना जाता सत्य, सत्य ध्यान से जाना जाता है। और ध्यान का अर्थ होता है: मन का अतिक्रमण। मनातीत हो जान।

नानक ने उसे अ-मनी दशा कहा है। मन से मुक्त हो जाना। नीचा और ऊंचा, ऐसा और वैसा, ये सब मन के ही खेल हैं। जहां मन बिलकुल चुप हो गया, जहां एकदम सन्नाटा छा गया, वहां सत्य का अवतरण होता है। सत्यं परम परम सत्य। और अब तुम जानते हो पहली बार विराट को। तब तुम जानते हो पहली बार उसको, जो है। वह निश्चित ही परम है। परम का अर्थ: उसे जानने वाला सब जान लिया जो जानने योग्य है। परम का अर्थ: उसे जिसने पी लिया, अमृत पी लिया। परम अर्थ: उसने परमात्मा को जान लिया, उसने आत्मा की आत्यंतिक सुगंध पहचान ली। उस सुगंध के जीवन में आ जाते ही क्रांति हो जाती है। उस क्रांति को ही स्वर्ग कहते हैं।

स्वर्ग कोई भौगोलिक अवस्था नहीं है।

सत्येन न स्वर्गाल्लोकाच च्यवन्ते कदाचेन।

जिसने सत्य को जाना, जिसने सत्य को जीया, वह स्वर्ग में प्रविष्ट हो गया। और ऐसे स्वर्ग में, जहां से कोई पतन नहीं होता। जहां से कभी कोई गिरता नहीं।

तुम जिस स्वर्ग की बातें करते हो, वहां से तो लोग गिरते हैं। वहां तो वही भय है; वह तो वही राजनीति है। तुम्हारे पुराण कथाओं से भरे पड़े हुई हैं। वे सब कथाएं। झूठ इसलिए हैं कि जिस स्वर्ग की बात की गयी हैं, वह भौगोलिक है। और जिस स्वर्ग की बात की गयी है, वह वह स्वर्ग नहीं है जिसकी यह उपनिषद चर्चा कर रहा है। नहीं तो इंद्र को क्या भय हो सकता है? कोई ऋषि, कोई मुनि ध्यान करे, समाधि के निकट पहुंचने लगे, तो इंद्र का आसन क्यों डावांडोल हो जाता है? इंद्र को क्या भय होने लगता है? क्या घबड़ाहट होने लगती है? घबड़ाहट होती है, पुराण कहते हैं, कि कहीं मेरा सिंहासन न छिन जाए। सत्य कहीं छिना है! और जो छिन जाए, वह सत्य नहीं है। जो छिन सकता है, वह छिन ही गया। उसका कोई मूल्य नहीं है, वह दो कौड़ी का है। तुमने तिनके का सहारा पकड़ा है। तुम सोच रहे हो कि तुम बच जाओगे। तुम भी डूबोगे और तुम्हारे साथ तिनका भी डूबेगा। तिनके को पकड़ कर कोई बचा है? मगर कहावत है: डूबते को तिनके का सहारा। आशा लगा रखता है। तिनके ही से आशा लगा लेता है। तिनके को ही पकड़ लेता है। आंख बंद कर लेता है कि दिखाई न पड़े कि तिनका है।

ये तुम्हारे इंद्र तुम्हारी कल्पनाएं हैं। ये तुम्हारे देवी-देवता तुम्हारी कल्पनाएं हैं। यह तुम्हारा स्वर्ग तुम्हारी अधूरी आकांक्षाओं का प्रक्षेपण है। जो तुम वहां नहीं पूरा कर पाए हो--चाहा तो था कर लेना पूरा, मगर नहीं पूरा कर पाए। क्योंकि जिंदगी में सभी इच्छाएं कैसे पूरी हों? इच्छाएं अनंत हैं और जीवन छोटा-सा। यह सत्तर साल की छोटी-सी जिंदगी और इच्छाओं का तो कोई अंत ही नहीं। और एक-एक इच्छा भी दुष्पूर है। और अनंत इच्छाएं! बहुत कुछ अधूरा रह जाता है। सभी कुछ अधूरा रह जाता है। हर आदमी अधूरा ही मर जाता है।--तो

अब इस अधूरी इच्छाओं के लिए कुछ तो आशा चाहिए, कि आगे कहीं पूरी हो जाएंगी। स्वर्ग तुम्हारी इन्हीं अधूरी इच्छाओं की आधारशिला पर खड़ा है।

यहां तुमने सुंदर स्त्रियां चाही थीं, वहीं मिलीं। यहां तुमने सुंदर पुरुष चाहे थे, नहीं मिले। यहां सौंदर्य मृगमरीचिका है। दूर से देखो, तो स्त्री सुंदर मालूम होती है, पुरुष सुंदर मालूम होता है, पास आओ और फूल कांटों में बदल जाते हैं, यह समझ में भी नहीं आता! प्यारे-प्यारे ओंठ और कैसे-कैसे कठोर शब्द बोलने लगते हैं! प्यारी-प्यारी आंखें और कैसे दग्ध अंगारे बन जाती है! सुंदर-सुंदर देहें, किस तरह जंजीरें बन जाती हैं! यह तुम सबका अनुभव है। और तब आदमी आशा के फूलों की मालाएं पिरोने लगता है। स्वर्ग में अप्सराएं होंगी--उर्वशी होगी, मेनका होगी--स्वर्ण उनकी काया होगी, कंठ उनके कोकिल-कंठ होंगे, उनके जीवन में सुवास-ही सुवास होगी...पसीना भी नहीं बहता स्वर्ग में अप्सराओं को! अप्सराएं बूढ़ी भी नहीं होती।

मुल्ला नसरुद्दीन एक स्त्री के प्रेम में था और कहता था कि सदा तुझे प्रेम करूंगा। स्त्रियों को ऐसी बातों पर भरोसा नहीं आता। सुन लेती है, इनकार भी नहीं करतीं--क्योंकि इनकार करने का मन नहीं होता--मगर भरोसा नहीं आता। बहुत बार सुन चुकी तो एक दिन उसने पूछा कि तुमसे सच पूछती हूं, ईमान से कहो, खाओ परमात्मा की कसम, छाती पर हाथ रख कर कहो, सदा मुझे प्रेम करोगे? जब मैं बूढ़ी हो जाऊंगी, जीर्ण-जर्जर हो जाऊंगी, तब भी तुम मुझे प्रेम करोगे? जब मैं बीमार हो जाऊंगी, रुग्ण हो जाऊंगी, हड्डी-मांस सूखने लगेगा, तब भी तुम मुझे प्रेम करोगे? मुल्ला नसरुद्दीन थोड़ा झिझका। उसने नहीं सोचा था कि बात यहां तक पहुंचेगी। उसने कहा, हां-हां जरूर प्रेम करूंगा! और फिर कुछ सोच कर कहा, लेकिन एक बात बताओ, तुम अपनी मां जैसी तो नहीं मालूम होने लगेगी?

मां जैसी तो मालूम होने ही लगेगी। इतनी शर्त उसने बचा ली, कि इतना भर ख्याल रखना कि मां जैसी मालूम मत होने लगना!

लोग प्रेम में जो बातें कह देते हैं, फिर पीछे पछताते हैं। इस जगत में धन इकट्ठा हो जाता है, निर्धनता नहीं मिटती। महल बन जाते हैं, मगर मौन सब छीन लेता है। तो स्वर्ग की कल्पना की है। वह स्वर्ग और उपनिषद के ऋषियों का, द्रष्टाओं का स्वर्ग बड़े भिन्न हैं। तुम्हारे पुराण कपोल-कल्पनाएं हैं। कचरा हैं। लेकिन उपनिषद मणि-माणिक्य हैं।

यह सूत्र कोहिनूर जैसा है। यह सूत्र कह रहा है: सत्य में जीना स्वर्ग है। यह बात और हो गयी। इसका भूगोल से नाता न रहा। यह बात आध्यात्मिक हो गयी। इसका बाहर से कोई संबंध न रहा, बात भीतर की ही हो गयी। सत्य में जीना स्वर्ग है। समाधि मैं जीना स्वर्ग है। मन के पार होना स्वर्ग है। और तुम्हारा स्वर्ग तो मन की ही आकांक्षाएं है, मन की ही एषणाएं है। वह तो हारे-थके मन की ही आखिरी आशा है कि चलो, यह नहीं तो मौत के बाद। चलो, यहां नहीं तो आगे। कहीं न कहीं मिलेगा। और आदमी आशा के बल जीए चला जाता है। हजार तरह के दुख, झेले चला जाता है। पहाड़ जैसे बोझ ढोए चला जाता है। आशा बनी रहती है कि आगे।

तुमने कहावत सुनी है कि आशावादी व्यक्ति जब रेलगाड़ी के पहाड़ों के बीच में खुदे हुए बोगदों में से देखता है, तो उसे दूर उस पर किनारे पर रोशनी दिखाई पड़ती है। और वह चल पड़ता है, मीलों लंबे अंधेरे बोगदे में, इस आशा में कि वह दूर जो रोशनी दिखाई पड़ रही है, अभी नहीं कल, कल नहीं परसों, नहीं तो नरसों...! और इसी आशा में तो हमने अनेक जन्मों की कथा गढ़ ली है। क्योंकि एक जन्म में तो भरोसा नहीं लगता कि यह बोगदा पार होगा, यह अंधेरा पार होगा। तो चौरासी करोड़ योनियों की हमने कल्पना की है। सोचो तुम जरा, चौरासी करोड़ योनियां! इसका मतलब यह है कि कभी न कभी तो यह अंधेरा पार होगा! कभी न कभी तो यह रात कटेगी, सहर होगी, सुबह होगी!

मगर अक्सर यह होता है कि अंधेरा तो कटता नहीं और वह जो प्रकाश बोगदे के उस किनारे पर दिखाई पड़ता है, वह किसी ट्रेन के आने का प्रकाश सिद्ध होता है। आ तो जाता है, मगर तुमको कुचलता हुआ निकल जाता है। तुम्हारी हड्डी-पसली तोड़ता हुआ निकल जाता है।

तुम्हारी सब आशाएं दुराशाएं सिद्ध होती हैं। तुम्हारी हर आशा हताशा में परिणित हो जाती है। मगर आदमी फिर नयी-नयी आशाएं संजो लेता है, फिर सोचने लगता है, फिर सपने देखने लगता है।

पुराणों में जिन स्वर्गों की चर्चाएं हैं, वे चाहे हिंदुओं के हों, चाहे मुसलमानों के, चाहे ईसाइयों के, यह सिर्फ मनुष्य की एषणाओं की ही विस्तार है। लेकिन उपनिषद जिस स्वर्ग की बात कह रहा है, वह बात ही और। सत्य में जीना स्वर्ग है। और निश्चित ही जिसने सत्य में जीना जान लिया, वहां से कोई कैसे च्युत हो सकता है? उस आलोक से, उस आनंद से, छंद से कोई कैसे नीचे गिर सकता है? वह संगीत मिला एक बार, तो मिला सदा को।

बुद्ध ने कहा है: दुख का प्रारंभ नहीं है, अंत है, और आनंद का प्रारंभ है, अंत नहीं। बहुत गहरी बात कहीं! तुम्हारे दुख का कोई प्रारंभ नहीं है, अनंत काल से तुम दुख भोग रहे हो। प्रारंभ खोजने निकलोगे, मिलेगा नहीं। जैसा खोदते जाओगे, उतना और आगे, और आगे, पता चलेगा कि जड़ें और भी पीछे चली गयी हैं, और भी पीछे चली गयी हैं। दुख का कोई प्रारंभ नहीं है, बुद्ध कहते हैं, लेकिन अंत है। चाहो तो अभी अंत हो जाए। चाहो तो यही अंत हो जाए। इसी क्षण अंत हो जाए। दुख का अंत है, क्योंकि मन के पार होने का उपाय है।

बुद्ध ने चार सत्य कहे हैं। पहला सत्य दुख है। अधिकतर लोग तो इसको अंगीकार ही नहीं करते। इसको झुठलाते हैं, छिपाते हैं, दबाते हैं। तुम किसी से पूछो, कैसे हो? वह कहता है: बड़े मजे में हैं। और इसकी आंखों में देखो, इसके चेहरे पर देखो, कहीं कुछ मजा दिखाई पड़ता है! जो देखो वही मुसकरा कर कहता है: प्रभु की बड़ी कृपा है! सब ठीक-ठाक चल रहा है। तुम भी यही कहते हो। कहीं कुछ ठीक-ठाक नहीं चल रहा है! सारी पृथ्वी उदासी से भरी हुई है, दुख से भरी हुई है, नर्क बनी हुई है--और हर आदमी कह रहा है: सब ठीक-ठाक

चल रहा है! प्रभु की बड़ी कृपा है! आनंद ही आनंद है! झूठ ही लोग बोल रहे हैं। एक दिखावा है। और दिखावे का भी कारण है। क्या सारे है अपने घाव दूसरों के सामने प्रकट करने से? अपनी मवाद किसी के सामने उघाड़ने से सार क्या है? कौन बंटा लेगा? तो छुपाए ही रखो! मवाद है, घाव हैं, फूल ले जाओ बाजार से खरीद कर, उनके ऊपर फूल सजा दो। लोगों को तो फूल दिखने दो।

तुम भी लोगों को देख कर मुस्कुराते हो, वह भी मुस्कुराते हैं, न तुम्हारे भीतर मुस्कुराहट है, न उनके भीतर मुस्कुराहट है। तुम्हारे भीतर भी आंसू भरे हैं और उनके भीतर भी आंसू भरे हैं। मगर एक चेहरा बना कर रखना पड़ता है। इसको लोग कहते हैं: शिष्टाचार, सभ्यता , संस्कृति। एक पाखंड बना कर रखना पड़ता है।

बुद्ध कहते हैं: पहले तो स्वीकार करो कि दुख है। क्योंकि अगर तुम दुख को स्वीकार ही न करोगे, तो फिर आगे तो यात्रा चलेगी ही नहीं।

फिर दूसरी बात बुद्ध कहते हैं: समझने की कोशिश करो कि दुख के कारण हैं। अकारण तो कोई नहीं होता। मत टालो भाग्य पर! भाग्य तो बहाना है। कारण से बचने का बहाना है। मत कहो विधाता ने लिख दिया है! मत कहो कि किसी और की जिम्मेवारी है। कारण हो तो तुम हो। कारण हैं तो तुम्हारे भीतर हैं, तुम्हारी मूर्च्छा में हैं। अब क्रोध करोगे तो दुख न होगा तो क्या होगा? और लोभ करोगे तो दुख न होगा तो और क्या होगा? दूसरों को दुख दोगे, सताओगे, तो क्या तुम सोचते हो तुम्हारे जीवन में सुख की वीणा बजेगी? तुम जो दूसरों को दोगे, वही तुम पर लौट आएगा। यह जगत तो प्रतिफल करता है। यह जगत तो यूं हैं कि तुम जो इसे देते हो, उसी को हजार गुना करके लौटा देता है। सब तुम पर ही आ जाता है वापिस। जो गड्ढे तुम औरों के लिए खोदते हो, एक दिन सिद्ध होता है कि तुम्हारे लिए ही, तुम्हारी ही कब्र बन जाती हैं।

तो कारण हैं। लेकिन हम कारणों को भी बचाते हैं। पहले तो हम दुख है, यह मानने को राजी नहीं होते। आने से भी छिपाते हैं, औरों से भी छिपाते हैं। यूं भ्रांति बनाए रखते हैं, ऐसा भरम बनाए रखते हैं कि सब ठीक है। भीतर आग लगती रहती है, ज्वालामुखी उबलता है और बाहर एक मुखौटा ओढ़े रखते हैं। फिर दूसरे अगर यह स्वीकार भी कर लें कि दुख है, तो हम सदा कारण दूसरों पर थोपते हैं। पति अगर दुखी है तो पत्नी के कारण। पत्नी अगर दुखी है तो पति के कारण। बाप अगर दुखी है तो बेटे के कारण। बेटा अगर दुखी है तो बाप के कारण।

मुल्ला नसरुद्दीन का बेटा फजलू परीक्षा में असफल हो गया सो घर से भाग गया। अखबारों में विज्ञापन निकलवाएं: तुम्हारी मां दुखी हैं, तुम्हारे पिता दुखी हैं, बेटा घर लौट आओ! तुम्हारे बिना मर जाएंगे। मगर फजलू न लौटा सौ न लौटा। आखिर फजलू की मां की मां ने एक रामबाण विज्ञापन छपाया। कि बेटा अब एकदम आ जाओ! तुम इसी डर से भाग गये हो कि परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हुए। अब घबड़ाओ मत; तुम्हें डर था कि तुम्हारे पापा मारेंगे-

पीटेंगे, तुम्हारे पापा भी अपने डिपार्टमेंट की परीक्षा में असफल हो गये हैं--अब तुम घर आ जाओ! और फजलू उसी दिन घर आ गया।

एक-दूसरे से घबड़ाहट है! एक-दूसरे पर टाले हुए हैं! एक-दूसरे पर हटा रहे हैं!

और जो व्यक्ति कारण दूसरों पर छोड़ देता है, उसने फिर बचाव का उपाय खोज लिया। वह कहने लगा कि मैं करूं तो करूं क्या! समाज बुरा, समाज की व्यवस्था बुरी, यह परिवार का ढांचा बुरा, यह अर्थनीति बुरी, यह राजनीति बुरी। मैं अकेला आदमी इस भवसागर में फंसा हूं! कैसे हो छुटकारा? कूल दिखाई पड़ता नहीं, किनारे का कुछ पता नहीं। और हरेक जान लेने को तत्पर है।

यूं तुम बच जाते हो, मगर यह कुछ बचना न हुआ। यह अपने हाथ से फांसी लगा लेना हुआ। कारण तुम्हारे भीतर हैं।

इसलिए बुद्ध ने दूसरा आर्य-सत्य कहा--पहला: दुख है, और दूसरा कि दुख के कारण हैं, कारण तुम्हारे भीतर हैं। और तीसरा कारणों को काटने के उपाय हैं। हताश मत हो जाना! विधियां हैं, जिनसे कारण उखाड़े जा सकते हैं। एक बार पता चल जाए कि जड़ कहां है, तो गड्ढे खोदे जा सकते हैं, घास-पात उखाड़ी जा सकती है, काटी जा सकती है। उसी विधि का नाम धर्म है, ध्यान है, योग है, तंत्र हैं। अलग-अलग नाम हैं, मगर प्रक्रिया एक ही है। प्रक्रिया है: किसी भी तरह अपने को मन का साक्षी बना लेना। जैसी ही साक्षी तुम्हारे भीतर हुआ, अतिक्रमण हो जात है। तुम परम अवस्था को उपलब्ध हो गये। और बुद्ध ने कहा: चौथा आर्य सत्य है कि कारण व्यर्थ नहीं हैं और उपाय भी व्यर्थ नहीं जाते, वह अवस्था भी है जहां दुख बिलकुल समाप्त हो जाता है, शून्य हो जाता है। वह परम आनंद की अवस्था भी है। उसका मैं गवाह हूं। बुद्ध ने कहा: उसका में गवाह हूं। मैंने जाना है, इसलिए तुमसे कहता हूं।

सत्य में जो जीएगा, उस जीवन से फिर गिरना असंभव है। सत्य में जो जीएगा, वह कैसे असत्य में गिर सकता है?

सतां हि सत्य।

और फिर सत्य क्या है? सत्पुरुषों का स्वरूप ही सत्य है। सतां हि सत्य। उनकी जो सत्ता है, वही सत्य है। सत्य कोई सिद्धांत नहीं, कोई निष्कर्ष नहीं, प्रबुद्ध-पुरुषों के भीतर जो आभा है, जो उनका अस्तित्व है, जो उनका स्वरूप है, उनके भीतर जो कलकल नाद हो रहा है, उनके चारों तरफ जो किरणें विकीर्ण हो रही हैं, जो गंध उड़ चली है, वही सत्य है। तो सत्य कुछ ऐसा नहीं है जैसे गणित के सत्य होते हैं कि दो और चार। सत्य कुछ ऐसा नहीं है जैसे विज्ञान के सत्य होते हैं, जिनको प्रयोगशालाओं में प्रयोग करके पाया जाता है। सत्य तुम्हारे जीवन की आत्यंतिक अनुभूति है। तुम क्या हो, इसकी अनुभूति सत्य है। तुम्हारा स्वरूप क्या है, तुम्हारा वास्तविक होना क्या है, इस सत्य को न वेदों से पाया जा सकता है, न कुरानों से, न बाइबिलों से। इसे पाना हो तो अपने भीतर ही उस आखिरी गहराई में डुबकी मारनी जरूरी है। जिन खोजा तिन पाइयां। जिन्होंने खोजा, जरूर पाया है।

जिन खोजा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ। कबीर ठीक कहते हैं। मगर बड़ी गहराई में बैठना होता है, ताकि तुम अपनी आधारभूमि को खोज लो, अपने स्वरूप को खोज लो। और तुम्हारे स्वरूप पर बहुत-सा कचरा लाद दिया है दूसरों ने, उस सबको काटना पड़ेगा, हटाना पड़ेगा। न-मालूम कितने पत्थर तुम्हारे ऊपर रख दिये हैं! तुम्हारा स्वरूप तो न-मालूम कहां खो गया है, पत्थर पर पत्थर रख दिये हैं। कि तुम हिंदू हो! बच्चा पैदा हुआ नहीं कि जल्दी से इसका यज्ञोपवीत करो! बच्चा पैदा हुआ नहीं कि इसका खतना करो, इसको मुसलमान बनाओ! बच्चा पैदा हुआ नहीं कि इसको बपतिस्मा करो, इसको ईसाई बनाओ। रखने लगे लोग पत्थर! चढ़ाने लगे चट्टानें तुम्हारे ऊपर! तुमसे कहने लगे, तुम ईसाई हो।

जब भी कोई बच्चा पैदा होता है, न तो ईसाई होता है, न हिंदू होता है, न जैन होता है। बच्चा तो सिर्फ एक शुद्ध चेतना, एक कोरी किताब की तरह पैदा हाता है। मगर लोग बैठे हैं स्याही में अपनी-अपनी कलमें डुबोए हुए कि इधर बच्चा पैदा हो कि वे उसकी कोरी किताब पर लिखावट शुरू करें! कोई लिख देगा गीता को, कोई लिख देगा कुरान को, कोई लिख देगा बाइबिल को। कर दी खराब उसकी कोरी किताब! उसे मौका ही न दिया कि वह अपने पहचान लेता। इसके पहले कि वह अपने को पहचानता, तुमने उसके ऊपर धारणाएं थोप दीं। कि तुम भारतीय हो, कि तुम चीनी हो, कि तुम जर्मन हो। तुम लादने लगे, कि तुम ब्राह्मण हो, कि तुम क्षत्रिय हो, कि तुम वैश्य हो, कि शूद्र हो। और फिर वर्गों में वर्ग बंटे हुए हैं। शूद्र भी सभी अपने को समान नहीं मानते। शूद्रों में भी नीचे शूद्र हैं और ऊंचे शूद्र हैं। मैं एक चमारों की सभा में बोलने गया। रैदास की वह जयंती मनाते थे, तो उन्होंने मुझसे कहा कि आप आएं, रैदास पर कुछ कहें। तो मैं गया। वहां देखा कि बस थोड़े-से चमार इकट्ठे हैं। मैंने कहा कि इस गांव में इतने शूद्र हैं--भंगी हैं, कुम्हार हैं--वे सब कहां हैं? चमारों ने कहा, क्या आप कहते हैं! हम भंगियों के साथ बैठें! मैंने कहा, फिर मैंने गलती की जो मैं तुम्हारे साथ बैठा। मुझे यह पता नहीं था कि तुम्हारे भीतर भी वर्ग हैं, श्रेणियां हैं। चमार अपने को ऊंचा मानते हैं भंगी से। भंगी के साथ कैसे बैठ सकता है। उन्होंने ब्राह्मणों को निमंत्रण दिया था, मगर ब्राह्मण कैसे आएं? मैंने उनसे पूछा कि तुमने मुझे किसलिए बुलाया? उन्होंने कहा, हमने आपको इसलिए बुलाया कि आपको सुनने वाले इतने लोग हैं, वे सब कम से कम आएंगे, मगर वे कोई नहीं आए। मैंने कहा, वे तुम्हारे साथ कैसे बैठें? जब तुम भंगियों के साथ बैठने को राजी नहीं हो, तो हद हो गयी, यह मुझे पता नहीं था अब तक कि शूद्रों में भी श्रेणियां हैं! उसमें भी ऊंचे शूद्र हैं, नीचे शूद्र हैं।

आदमी सिर्फ आदमी है। क्यों उस पर भूगोल लादते हो? क्यों इतिहास लादते हो? क्यों उस पर जमाने भर की गंदगियां लादते हो? मगर ये लाद दी गयी हैं। और जिस व्यक्ति को खोजना हो, अपने स्वरूप को, उसे इस सारी गंदगी को काटना होगा। इस कूड़े-करकट को अलग करना होगा--इसको आग लगा देनी होगी! इतना साहस न हो, तो कोई सत्य को उपलब्ध नहीं हो सकता है।

सतां हि सत्य। तुम्हारा स्वरूप सत्य है। और स्वरूप के ऊपर बहुत पर्तें जम गयी हैं, बहुत धूल जम गयी है। दर्पण पर इतनी धूल जम गयी है कि दर्पण का पता ही नहीं चलता। यह सारी दर्पण साफ करनी है।

कष्टपूर्ण है।

क्योंकि किसी से भी कहो कि तुम्हारा हिंदू होना बाधा है स्वरूप को जानने में, या मुसलमान होना, या जैन होना, वह झगड़ा करने को तैयार है। वह मरने-मारने को तैयार है। क्योंकि वह यह नहीं सोचता कि ये थोपी गयी चीजें हैं, यह उसका स्वरूप नहीं है, ये विकृतियां हैं, यह धार्मिकता नहीं है। धार्मिक व्यक्ति सिर्फ धार्मिक होता है। उसमें कोई विशेषण नहीं होते। धार्मिक व्यक्ति की कोई राष्ट्रीयता नहीं होती। धार्मिक व्यक्ति न गोरा मानता अपने को, न काला मानता। क्योंकि वह अपने को शरीर ही नहीं मानता। वह अपने को चेतना मानता है। धार्मिक व्यक्ति न अपने को पुरुष समझता, न स्त्री। क्योंकि चेतना कहीं स्त्री और पुरुष होती है! आत्मा भी वहीं स्त्री और पुरुष होती है! मगर क्या-क्या पागलपन हैं! जैनों की धारणा है कि स्त्री की देह से मोक्ष नहीं। मोक्ष क्या देह का होता है? देह तो यहीं पड़ी रह जाती है--पुरुष की हो कि स्त्री की हो। मोक्ष अगर होगा तो आत्मा का होगा। और मोक्ष अगर होगा तो साक्षीभाव में होगा। तो पुरुष की आत्मा देखेगी कि मेरे चारों तरफ पुरुष का शरीर है और स्त्री की आत्मा देखेगी कि मेरे चारों तरफ स्त्री का शरीर है। मगर आत्मा थोड़े ही स्त्री है! आत्मा तो साक्षी है। दोनों की। एक सी साक्षी है। हां, गोरे आदमी की आत्मा देखेगी कि मेरे चारों तरफ गोरी चमड़ी है काले आदमी की देखेगी कि मेरे चारों तरफ काली चमड़ी है, लेकिन आत्मा चमड़ी नहीं है। लेकिन हम बस न-मालूम किन-किन बातों में आत्मा को गंवा बैठे हैं! धन गंवा दिया है, कंकड़-पत्थर इकट्ठे कर लिये हैं। स्वरूप को खो बैठे हैं, शास्त्रों से लद गये हैं। सत्य का तो कोई बोध नहीं है, लेकिन सिद्धांतों में बड़े हम प्रवीण हो गये हैं।

सतां हि सत्य।

और सत्य है तुम्हारा स्वरूप।

तस्मात्सत्ये रमन्ते।

इसलिए रमो सत्य में। इसलिए जीओ सत्य में। और सत्य में जो जीता है, वही संत है, इसलिए मैं तुमसे यह कहना चहता हूं कि अगर संत कहे कि मैं हिंदू हूं, तो समझ लेना कि संत नहीं है। अगर संत कहे कि मैं जैन हूं, तो समझ लेना कि संत नहीं है। संत तो वही है जो सत्य में जीता है। और सत्य न हिंदू है, न मुसलमान है; न जैन है, न ईसाई है। सत्य न तो मंदिरों में है, न गिरजों में, न गुरुद्वारों में। सत्य तुम्हारे भीतर है। सत्य आत्मान्वेषण है।

यह सूत्र प्यारा है! यह सूत्र जीने योग्य है!

दूसरा प्रश्नः भगवान, मैं तो विवाह में फंस कर नर्क भोग रहा हूं। आप विवाह से कैसे बच गये? यह भी बताएं कि क्या मेरे लिए अब भी बचने का कोई उपाय है? मैं अपना नाम नहीं

लिख रहा हूं, क्योंकि मेरी पत्नी भी यही मौजूद है। पर आप उत्तर जरूर देना। थोड़ा लिखा, ज्यादा समझना।

थोड़ा लिखा, वह तो ज्यादा समझूंगा, जो नहीं लिखा, वह भी समझ लिया।
पहली बात तो तुम पूछे हो: आप विवाह से कैसे बच सके? अरे, जाको राखै साइयां मार सकै न कोय? और तुम पूछ रहे हो: में विवाह में फंस कर नर्क भोग रहा हूं। नहीं, तुमको नर्क भोगना होगा, इसलिए विवाह में फंसे होओगे। उल्टी बातें न करो! तुम दोष दे रहे हो विवाह को। जैसे कि विवाह ने तुम्हें कर लिया। अरे, तुमने विवाह किया है! तुम्हीं घोड़े पर चढ़े होओगे, मोर-मुकुट बांध कर! देखते हो, मोरारजी देसाई गधे तक पर चढ़ने को तैयार हैं! तुम घोड़े पर चढ़े होओगे, दूल्हा राजा बने होओगे! क्या मजा है, एक दिन के लिए राजा बना देते हैं आदमी को, फिर जिंदगी भर का गुलाम--जोरू का गुलाम! और क्या गहरी तुम्हारी गुलामी है कि अपना नाम भी नहीं लिख रहे हो! क्योंकि पत्नी यही मौजूद है।
मैं समझा तुम्हारी तकलीफ!
पति का अर्थ ही है: जिसकी इति हो गयी। कि जिसमें अब कुछ न बचा। और पत्नी का मतलब है: सदा रहे तनीत्तनी। वह बैठी होगी तुम्हारे बगल में और तनीत्तनी। और तुम यह मत समझना कि तुमने नाम नहीं लिखा है तो वह नहीं पहचानेगी। अरे, जब तुमने कम लिखा और मैं ज्यादा समझ रहा हूं, तो तुम्हारी पत्नी तुम्हारा नाम न पहचान लेगी? नहीं लिखा पहचान लेगी? अभी भी हुद्दे मार रही होगी तुमको! कि घर चलो, घर चल कर दिखाऊंगी तुम्हें!
मैंने सुना है, एक जोड़ा मर कर स्वर्ग के द्वार पर पहुंचा--और भी बहुत लोग मर कर पहुंचे थे। रोज ही इतने लोग मरते हैं कि भीड़ लगी रहती है वहां, स्वर्ग के दरवाजे पर दो तख्तियां लगी थीं। एक तख्ती लगी थी कि जोरू के गुलाम यहां से प्रवेश करें। और जो अपनी जोरू के गुलाम नहीं हैं, उनके लिए एक दूसरा दरवाजा था; वे यहां से प्रवेश करें! सारी भीड़ वहीं थी, जोरू के गुलाम जहां तख्ती लगी थी। सिर्फ एक आदमी, एक दुबला-पतला सा आदमी--शायद तुम्हीं रहे होओ--डरा-डरा उस दरवाजे पर खड़ा था--अकेला ही--जहां से उनके लिए प्रवेश था जो जोरू के गुलाम नहीं हैं। जो राजदूत पहरा दे रहा था--रहे होंगे हमारे संत महात्मा जैसे--उसने जाकर उस आदमी को एक धक्का दिया और कहा, तू यहां क्या कर रहा है? तू समझता है तू जोरू का गुलाम नहीं! चल, लग "क्यू' में, जहां बड़े-बड़े पहलवान खड़े हैं! तू यहां क्या कर रहा है? उसने कहा, मैं क्या करूं? मैं यहां से नहीं हट सकता! राजदूत ने कहा, क्यों नहीं हट सकता, क्या तकलीफ है तुझे? उसने कहा, मेरी पत्नी ने कहा कि तू यहीं खड़ा रह! भगवान भी मुझे हटाएं तो मैं हटने वाला नहीं हूं, जब तक मेरी पत्नी न कहेगी। उसने कहा है, तू इस दरवाजे से प्रवेश कर। मैं इसी से प्रवेश करूंगा। मैं कभी उसकी आज्ञा के खिलाफ नहीं जा सकता।

तुम कहते हो, मैं विवाह में फंस कर नर्क भोग रहा हूं। फंसे क्यों? नर्क भोगना होगा, इसलिए। और नर्क भोग रहे हो, क्योंकि भोगना चाहते हो। जरा गौर से अपने भीतर कारण खोजो। कारण दूसरे पर मत टालो! और तुम अकेले ही थोड़े भोग रहे होओगे नर्क, तुम्हारी पत्नी भी भोग रही होगी। क्योंकि नारकीय प्राणियों के साथ कोई स्वर्ग भोग सकता है? जब तुम नर्क में हो, तो तुम्हारी पत्नी क्या स्वर्ग में हो सकती है? इतना फासला हो तो तुम निकल ही न भागो। वह भी तुम्हारे बगल में ही बैठी है--यहां भी बैठी है! तो साथ ही साथ भोग रहे होओगे। एक-दूसरे का नर्क बना रहे होओगे, यह हो सकता है। नहीं तो किसी भी क्षण नर्क के बाहर हुआ जा सकता है। कोई रोकने वाला नहीं है। क्या बेचारी पत्नी की हैसियत हो सकती है।

पत्नी से पति इतने डरे क्यों होते हैं? डरने का कारण उनके ही भीतर होता है। कारण अपने भीतर खोजने की कोशिश करो! और तुम तत्क्षण पहचान लोगे कि कहां अड़चन है। तुम पत्नी के सामने एक रूप प्रकट कर रहे हो, अपना जो तुम्हारा असली रूप नहीं है। इससे तुम्हें डर है। झूठ हमेशा डर लगता है। असत्य के साथ भय आएगा ही।

सेठ चंदूलाल एक रात सपने में जोर से बोल गये: कमला! प्यारी कमला!! और पत्नी का नाम है: निर्मला। और पत्नियां तो नींद में भी सोती नहीं। ध्यान तो रखती है कि पति क्या सपना देख रहे है। सपने में पता नहीं कुछ गड़बड़ कर रहा हो। कमला! यह कमला कौन है! उसने उसी वक्त हिलाया चंदूलाल को कि कौन है यह कमला? यह कलमुंही कौन है? नींद में थे, एकदम घबड़ा भी गये! कि अचानक कमला का मामला कहां से आ गया? उन्हें तो पता ही नहीं कि सपने में क्या बर्रा रहे थे! उसने कहा, मैं कुछ समझा नहीं। कि जरा मुझे हाथ-मुंह तो धो लेने दो, बात क्या है? कौन कमला? उसने कहा, अभी तुमने नींद में दो दफे कहा, कमला, कमला! तब तक उन्होंने अपना हिसाब बिठा लिया था। उन्होंने कहां, अरे कुछ भी नहीं है, एक घोड़ी का नाम है--रेसकोर्स की एक घोड़ी का नाम है कमला, उस पर मैंने दांव लगाया है। उसकी याद आ गयी होगी।

मगर यूं कोई पत्नी को धोखा तो दे नहीं सकता। दोपहर को जब सेठ चंदूलाल दूकान पर बैठे थे, पत्नी का फोन आया कि घर आ जाओ जल्दी, क्योंकि वह घोड़ी तुमसे मिलने आयी है। और ऐसे घोड़ी मैंने पहले नहीं देखी, बिलकुल स्त्री जैसी मालूम होती है!

कहां तक बचोगे?

जहां झूठ बोले, जहां किया, वहां भय आया। सत्य हो तो भय नहीं है। सत्य अभय लाता है। तुम भयभीत हो अपनी पत्नी से इतने ज्यादा कि नाम नहीं लिख सकते! यह तो हद हो गयीं! अरे कच्छ केसरी, अचल गच्छाधिपति, जोरू के गुलाम सूरीश्वर महाराज, कुछ तो अपने को समादर दो! कुछ तो अपनी आत्म-प्रतिष्ठा रखो! ऐसे क्या बिलकुल भीगी बिल्ली बने हो! कारण खोजो कि इतना भय क्या है? क्यों इतने डरे हुए हो?

सेठ चंदूलाल के बेटे ने पूछा, पापा, यह बकरा में-में क्यों करता है? चंदूलाल ने कहा, बेटा, इसे कसाइयों ने पकड़ लिया है। दो-चार घड़ी का मेहमान है यह। इसको, झटका देकर

मार कर इसका मांस बाजार में बेचा जाएगा। बेटा बोला, बस इतनी-सी बात के पीछे में-में कर रहा है। अरे, मैं तो समझा कि लोग इसका विवाह करने ले जा रहे हैं!

चंदूलाल का बेटा देखता है अपने बाप की दुर्गति दिन-रात, स्वभावतः उसने सोचा कि इसका भी विवाह हो रहा है दिखता है। जो हमारे बाप पर गुजर रही है, वही इस पर गुजर रही है। तुम्हारे बच्चे भी जानते हैं।

एक घर में बच्चों में शांति रहे, सुव्यवस्था रहे तो बच्चों की मां ने कहा सबको इकट्ठे करके कि सुनो,...भारतीय परिवार, कोई डेढ़ दर्जन बच्चे! एक ही चीज का उत्पादन हम जानते हैं: बच्चे!...सबको इकट्ठे कर लिया। सबको वह एक जैसे कपड़े पहनाती थी। कई दफा उससे पूछा भी लोगों ने कि सबको एक जैसे कपड़े क्यों पहनाती है? पहले उनके तीन-चार ही बच्चे थे, उनको भी एक जैसे कपड़े पहनाती थी। तब वह कहती थी कि कहीं खो न जाएं, इसलिए, और अब दस-पंद्रह बच्चे हैं, अब भी एक से कपड़े पहनाती है तो लोग पूछते हैं: अब क्यों? तो वह कहती है कि इनमें कोई दूसरा आकर न मिल जाए! नहीं तो पता नहीं चलेगा, महीने-दो महीने तो पता ही नहीं चलेगा। इतनी भीड़-भड़क्का है! तो घर की तुम हालत समझ सकते हो!

सबको इकट्ठा करके उसने कहा कि अब मैंने एक नियम बनाया है कि हर सप्ताह पुरस्कार बांटा जाएगा। जो सबसे ज्यादा आज्ञाकारी होगा, उसको पुरस्कार मिलेगा। सब बच्चों ने कहा कि हमें इसमें कोई रस नहीं है। उसने कहा, क्यों? बच्चों ने कहा कि हमें मालूम है कि पुरस्कार किसको मिलेगा। पिता जी को मिलेगा। आज्ञाकारी होना है, यह हमेशा पुरस्कार पिता जी को जाएगा, इसलिए हमें इसमें कोई रस नहीं है।

क्यों इतने तुम डरे हुए हो? इतना भय का क्या है? आखिरी पत्नी कोई जंगली जानवर तो नहीं है! कारण तुम्हारे भीतर होंगे।

तुम पत्नी के सामने सरलता से अपनी प्रामाणिकता की उदघोषणा करो! तुम जैसे हो वैसे ही खोल कर अपने को रख दो! एक दफा झंझट होगी। तुम आज यहां आकर भी अपना नाम नहीं लिख रहे हो! और पत्नी तो पता लगा लेगी! उसे तो पता लग ही गया होगा कि कौन सज्जन हैं ये!

"एक जैसी सैकड़ों भैंसों में से तुमने अपनी भैंस को कैसे पहचान लिया?'--जज ने एक फरियादी महिला से पूछा।

उसकी भैंस खो गयी थी और उसने सैकड़ों भैंसों से अपनी भैंस को खोज लिया।

वह महिला बोली, "इसमें कौन-सी बड़ी बात है, मालिक! अरे, आपकी कचहरी में सैकड़ों काले कोट पहने हुए वकील खड़े हैं, भैंसों जैसे ही लगते हैं, लेकिन मैं अपने वकील को फिर भी पहचान ही रही हूं या नहीं? इसी तरह अपनी भैंस को मैंने पहचान लिया।'

तुम्हारी पत्नी तुम्हें पहचानती होगी। अरे, अपनी भैंस को कौन नहीं पहचानता! तुम नाम लिख ही देते तो कम से कम ईमानदारी शुरू तो होती--यहीं से ईमानदारी शुरू करो! और नहीं तो बात तो पकड़ी जाएगी! अब तुम चोरी-छिपे घर जाओगे। अब तुम डरते हुए, कंपते हुए

घर जाओगे। यही भय का कारण है। हमेशा प्रामाणिक होने से भय के कारण विनष्ट हो जाते हैं। और जब तुम भयभीत रहोगे, तो देर-अबेर पकड़े जाओगे। और तब तक और बिगड़ जाती है।

स्विमिंग पूल में तैर रहे सेठ चंदूलाल की भेंट एक सुंदरी से करवायी गयी। उससे कुछ देर बात करने के बाद वे घर लौटने लगे, तब उस सुंदरी से कहा कि बाई, एक बात का ख्याल रखना, इस मुलाकात की कहीं चर्चा मत करना!

करीब एक माह बाद किसी पार्टी से सेठ चंदूलाल अपनी पत्नी के साथ गये, तो वही सुंदरी फिर मिल गयी। उसने दो-एक मिनिट चंदूलाल की और गौर से देखा, फिर नमस्कार करके बोली: "क्षमा कीजिएगा, आज आप कपड़े पहने हैं, इसलिए पहचानने में थोड़ा समय लग गया।'

अब फंसे! अब बुरी तरह फंसे!! ठीक ही है, देखा होगा स्विमिंग पूल पर नहाते हुए, लंगोटी लगाए हुए। अब किसी को लंगोटी लगाए देखो और फिर कपड़ों में देखो तो बहुत फर्क पड़ ही जाता है!...जैसे महावीर स्वामी तुम्हें मिल जाएं पेंट-कोट-टाई पहने हुए, तो मैं नहीं सोचता एक भी जैन मुनि पहचान पाएगा! सिर्फ मैं पहचान सकूंगा, बाकी कोई नहीं पहचान पाएगा। अब जिनको नंग-धड़ंग देखा, अब उनको कैसे पहचानोगे पेंट-कोट-टाई पहने हुए?...मगर फंस गये। अब बुरी तरह फंसे अब बचाव भी न रहा

अपने भय के कारण खोजो! पत्नी पर मत थोपो! पत्नी का क्या कसूर है? तुम डरते हो, इसलिए डराती है। एक दफा अपने सब मुखौटे अलग कर दो--अरे बहुत होगा तो बेलन चलाएगी तो वैसे ही चलाती है!--एक दफा जो होना है हो जाए, लेकिन एक दफा अपने सारे ताश के पत्ते सीधे करके रख दो! मगर एक बार निपटारा कर लो! कह दो कि मैं ऐसा आदमी हूं, यह मेरी स्थिति है, अंगीकार हो तो ठीक, न अंगीकार हो तो ठीक।

और मेरी अपनी समझ यह है--लाखों स्त्रियों का अध्ययन करने के बाद में यह कह रहा हूं--मेरी अपनी समझ यह है कि स्त्रियां अगर उनको धोखा न दिया जाए तो पुरुषों से बहुत ज्यादा प्रेमपूर्ण हैं। मगर जो उन्हें धोखा दे रहा हो, उसके प्रति उनकी कठोरता गहन हो जाती है। स्त्रियां बदला ले रही हैं सदियों का तुमसे। सदियों से आदमी ने स्त्रियों को इस तरह सताया है! और कोई उपाय भी नहीं छोड़ा तुमने। सब द्वार-दरवाजे बंद कर दिये हैं। उनके लिए कोई स्वतंत्रता नहीं छोड़ी। उनके लिए जीवन का कोई आयाम नहीं छोड़ा। तुम उन्हें कहीं अकेला जाने न दोगे, किसी से मिलने न दोगे, किसी से मैत्री न बनाने दोगे, उनके जीवन में किसी रुचि का विकास न होने दोगे, उनको सब तरह से घर में बंद कर दिया है, अगर उनका क्रोध उबल आता हो--और फिर तुम्हीं मिलते हो, और तो कोई है भी नहीं, तो किस पर अपना क्रोध फेंके?

तुम्हीं हो जिम्मेवार उनकी गुलामी के। उनको स्वतंत्रता दो!

अपनी पत्नी को तुम वस्तु मत समझो। क्योंकि तुम जिस पत्नी को वस्तु समझोगे वह भी तुम्हें रास्ते पर लगाएगी! वह भी तुम्हें वस्तु बना कर बताएगी! कोई भी व्यक्ति, चाहे स्त्री

हो, चाहे पुरुष, परतंत्र नहीं होना चाहता है। लेकिन पुरुषों स्त्रियों को तो परतंत्र बना लिया है और खुद चाहते हैं कि स्वतंत्र बने रहे। यह असंभव। यह सौदा नहीं हो सकता। इसका दुष्परिणाम हुआ है।

यहां मेरे आश्रम में तो कोई पुरुष संन्यासी किसी स्त्री से डरा हुआ नहीं हैं। कोई नहीं है। कोई वजह नहीं है। चीजें साफ-सुथरी हैं। और चीजें साफ-सुथरी होनी चाहिए। प्रामाणिक जीवन की यही तो शुरुआत है। तो किसी दिन शायद तुम परम सत्य को भी उपलब्ध हो सको। अगर तुम जीवन के इन छोटे-छोटे मामलों में भी असत्य हो, तो आशा ही छोड़ दो सत्य की।

मुल्ला नसरुद्दीन से मैंने पूछा, "नसरुद्दीन, क्या तुम्हारी और तुम्हारी पत्नी की राह कभी एक भी हुई है?'

नसरुद्दीन ने कहा, हां, केवल जीवन में एक बार, जब हमारे घर में आग लगी थी तब हम दोनों ने एक साथ आगे के दरवाजे से निकलने की सोची थी।'

पत्नी के साथ थोड़ी मैत्री बनाओ! लेकिन में नहीं देखता किसी पति की अपनी पत्नी से मैत्री हो। कि वह अपने हृदय की बातें उससे कहता हो। पति-पत्नी बातें करते ही नहीं। असल में पति बात ही करने में डरता है कि कही बात में कोई और बात न निकल आए। पत्नी को देखा कि एकदम अखबार पढ़ने लगता है--वही अखबार जो तीन दफे दिन भर में पढ़ चुका है, फिर पढ़ने लगता है। जल्दी से रेडियो खोल लेता है। या बातें भी करता है तो इधर-उधर की करता है, जिसमें पत्नी को खोल लेता है। या बातें भी करता है तो इधर-उधर की करता है, जिसमें पत्नी को कोई रस नहीं। जिसमें उनको भी कुछ रस नहीं, सिर्फ समय काटने के लिए बातें करता है। सिर्फ ऐसी बातें करता है जिनमें कोई झगड़े का उपाय न हो। और वही-वही बातें फिर रोज करता है। पत्नी भी ऊब जाती है उसकी बकवास सुन-सुन कर।

मैत्री साधो! प्रेम तो दूर की बात है, कम से कम मैत्री तो साधो! और मैत्री सधे तो शायद कभी प्रेम भी सध जाए।

कभी पत्नी के साथ बैठ कर ताश खेलते हो? कभी पत्नी के साथ बैठ कर शतरंज खेलते हो? कभी चौपड़ बिछाते हो? कभी पत्नी के साथ बैठ कर गपशप करते हो? कोई संबंध नहीं तुम्हारा मैत्री का। पति और पत्नी के बीच मैत्री असंभव मालूम होती है। तो फिर दुश्मनी ही बच रहती है। फिर क्या? एक ही नाता बच रहा फिर और वह दुश्मनी का।

और तुम कहते हो: स्त्री धन है। तुम ऐसी कहावतें बनाए हुए हो--

जर, जोरू, जमीन

झगड़े के घर तीन

तुमने जोरू को भी जमीन और जर के साथ जोड़ दिया। इस सारे अपमान का बदला किससे लिए जाए? तो यह विस्फोटक स्थिति है।

सेठ चंदूलाल अपनी पत्नी से बोले, "देख बाई, तू बात-बात में लड़ा नहीं कर। घर में थोड़ी शांति रहने दे। कृपा कर!' उनकी पत्नी गुलाबो ने बेलन उठाकर कहा, "तुम्हें यह इलजाम

लगाते शर्म नहीं आती? मैं कहां लड़ती हूं? ऐसे गलत इलजाम लगाए, तो याद रखना, ऐसा मारूंगी कि नानी याद आ जाएगी!'

पति और पत्नी की बीच एक तनाव है। और वह तनाव तुम झुठलाने की कोशिश करते हो, लीपापोती करते रहते हो, मगर उस तनाव को हल करने की कोशिश नहीं करते। तुम सरलता से स्वीकार करो कि पत्नी की भी अपनी स्वतंत्र आत्मा है। उसका अपना व्यक्तित्व है, अपनी निजता है। और तब वह भी तुम्हें मौका देगी स्वतंत्र होने का और निज होने का। और स्वतंत्रता के लिए सब कुछ न्योछावर किया जा सकता है। विवाह कुछ इतनी मूल्यवान चीज नहीं है कि उसके लिए तुम्हें अपना जीवन न्योछावर करना पड़े। और एक बार पत्नी को यह समझ में आ जाए कि तुम स्वतंत्रता को इतना प्रेम करते हो कि अगर विवाह भी खत्म हो तो तुम फिकिर न करोगे, लौट कर न सोचोगे, तो पत्नी पुनर्विचार करेगी पूरी स्थिति पर। लेकिन तुम डरे रहे तो डराए जाओगे।

टिल्लू गुरु बैठकखाने में दोस्तों से बातें कर रहे थे। उनकी बात सुन रहे उनके बेटे ने भाग कर मां को सूचना दी: "मां, मां, डैडी कह रहे हैं पति और गधे में अंतर नहीं होता। क्या वे गधे हैं?'

मां बोली, "बड़ों की बात में अविश्वास नहीं करना चाहिए। वे जो कहते हैं, सही ही कहते हैं।'

पति-पत्नी के बीच एक मैत्री का नाता चाहिए। अन्यथा क्या बच रहता है फिर? पत्नी नौकर हो गयी तुम्हारी। खाना बनाए, बच्चों को पाले, दिन भर घर साथ करे, तुम्हारे कपड़े धोए और फिर उसका शरीर है तुम्हारे लिए, उसका तुम रात उपयोग करो। और बदले में तुम क्या दे रहे हो? तुमने कभी पत्नी बर्तन मल रही हो, उसके साथ हाथ बंटाया बर्तन मलने में? वह घर साफ कर रही हो तो तुमने कभी कहा कि तू बैठ, आराम कर ले, मैं फुर्सत में बैठा हूं, मैं घर साफ किये देता हूं? तुम थोड़ा मैत्री बनाना शुरू करो, तो यह भय अपने से विसर्जित हो जाए।

और तुम पत्नी को सम्मान दो, तो ही सम्मान पा सकते हो। सम्मान के उत्तर में ही सम्मान मिलता है। तुम अपमान कर रहे हो, तो अपमान ही पाओगे। पुरुषों की यह दृष्टि है कि स्त्रियां क्या हैं? पैर की जूतियां हैं। कैसे सम्मान पाओगे? और साधारण लोगों की नहीं, तुम्हारे बाबा तुलसीदास जैसे लोगों की भी यहीं बुद्धि है। "ढोल गंवार शूद्र पसु नारी।' सबको ढोल गंवार में बिन दिया, पशुओं में गिन दिया, शूद्रों में गिन दिया स्त्रियों को। और कभी बाबा तुलसीदास ने यह भी न सोचा कि उनकी स्त्री के कारण ही उनके जीवन में राम का पदार्पण हुआ। उसी स्त्री को धन्यवाद देना था। उसको धन्यवाद तो कभी नहीं दिया, गाली दी। जैसे बदला दिया।

खुद तो कामी और अंधे थे। और इतने अंधे कि पत्नी गयी थी मायके तो भरी बरसात की रात में चोरी से पहुंच गये। नदी पार कर ली एक मुर्दे को पकड़ कर, यह सोच कर कि लकड़ी का कोई बड़ा भारी झाड़ जा रहा है। ऐसे अंधे रहे होंगे! वासना सदा अंधी होती है।

फिर घर के पीछे से गये--बाहर से तो जाने का उपाय न था। क्या कहते पत्नी के मां-बाप। कि अभी दो दिन तो उसे आए नहीं हुए और तुम चले आए! और आधी रात! यह कोई वक्त है आने का? कोई खबर भी न की! तो घर के पीछे से--बरसात के दिन थे, सांप लटक रहा था छज्जे से, उसको पकड़ कर चढ़ गये। वासना तो बिलकुल अंधी है, वे समझे कि रस्सी लटक रही है। होश ही कहां था?

पत्नी ने जब यह सब देखा, ऊपर जब पहुंचे, तो उसने कहा कि यह तुम क्या करते हो? अगर इतना प्रेम तुम्हारे मन में परमात्मा के प्रति होता, तो तुम परमात्मा को पा लेते। और यह अंधापन, यह मोह से आविष्ट दशा सुंदर तो नहीं है!

इसी चोट को खा कर तुलसीदास के जीवन में परिवर्तन आया। धन्यवाद देना था! रामचरितमानस को इसी स्त्री को समर्पित करना था। मगर समर्पण की तो बात दूर, स्त्रियों की गिनती शूद्रों में, ढोल में, गंवारों में। और ढोल की क्यों जोड़ दिया इसमें? इसलिए जोड़ दिया कि ढोल को मारो तो ही बजता है।' ये सब ताड़न के अधिकारी।' इनका एक ही अधिकार है कि इनको सताओ। तो ही जैसे ढोल बजता है मारने से, ऐसे ही स्त्री के जीवन में तुम्हारे प्रति आदमी होगा--मगर सताओगे, तो--सम्मान होगा।

यह तो बिलकुल ही मूढतापूर्ण बात है।

स्त्री को सम्मान दो, आदमी दो। तुमने बहुत अपमान किया है। तुमने ही नहीं, तुम्हारे तथाकथित महात्माओं ने बहुत अपमान किया है। स्त्री को नर्क का द्वार कहा है। स्त्री की जितना गर्हित आलोचना हो सकती है। स्वभावतः यह सब स्त्री के भीतर इकट्ठा हो गया है। यह उस जगह आ गया है जहां विस्फोट होता है।

और अगर हमें एक बेहतर मनुष्य जाति को जन्म देना हो, तो इस कूड़े-कचरे को साफ कर देना चाहिए स्त्री को सम्मान दो, वह तुम्हारी कोई गुलाम नहीं है। अगर तुमने उसे गुलाम बनाया, तो वह तुम्हें गुलाम बनाकर रहेगी। और तुमने अगर उसे भी स्वतंत्रता दी, तो तुम्हें भी स्वतंत्रता मिल सकती है।

लेकिन अच्छा हुआ कि यहां आ गये। शायद कुछ हो जाए। मेरी बातों को धैर्य-पूर्वक समझने की कोशिश करना। और पहला काम तो यह करना, जा कर पत्नी को कह देना कि मैंने ही प्रश्न पूछा था। इसी से शुरुआत होगी। साफ उससे कह देना कि मैंने ही प्रश्न पूछा था। और यह मेरी ही भ्रांतियां और मेरे ही भय आधारभूत हैं। अपने हृदय को खोल कर रख देना--निष्कपट। जब भी आ गये, भला। देर से आए तो भी भला। सुबह का भूला सांझ भी घर आ जाए तो भी भूला नहीं कहाता।

देर लगी आने में तुमको...
देर लगी आने में तुमको
शुक्र है फिर भी आए तो
देर लगी आने में तुमको
शुक्र है फिर भी आए तो...

आस ने दिल का साथ न छोड़ा...
आस ने दिल का साथ न छोड़ा
वैसे हम घबराए तो
आस ने दिल का साथ न छोड़ा
वैसे हम घबराए तो
देर लगी आने में तुमको...
शफक धनक मेहताब घटायें
तारे नभ में बिजली फूल
इस दामन में क्या-क्या कुछ है
दामन हाथ में आए तो
शफक धनक मेहताब घटायें
तारे नभ में बिजली फूल
इस दामन में क्या-क्या कुछ है
दामन हाथ में आए तो
देर लगी आने में उनको...
झूठ है सब तारीख हमेशा
अपने को दोहरानी है...
झूठ है सब तारीख हमेशा
अपने को दोहरानी है
अच्छा मेरा ख्वाबे-जवानी
थोड़ा-सा दोहराये तो...
अच्छा मेरा ख्वाबे जवानी
थोड़ा-सा दोहराये तो
देर लगी आने में तुमको...
चाहत के बदले में हम तो
बेच दें अपनी मर्जी भी...
चाहत के बदले में हम तो
बेच दें अपनी मर्जी भी
कोई मिले तो दिल का गाहक
कोई हमें अपनाये तो
कोई मिले तो दिल का गाहक
कोई हमें अपनाये तो
चाहते के बदले में हम तो
बेच दें अपनी मर्जी भी

कोई मिले तो दिल का गाहक
कोई हमें अपनाये तो
देर लगी आने में तुमको
शुक्र है फिर भी आए तो
आस ने दिल का साथ न छोड़ा
वैसे हम घबराये तो
देर लगी आने में तुमको...

कोई चिंता नहीं। विवाह हो गया, उलझ गये जाल में, लेकिन कितनी ही देर हो गयी हो, अभी भी क्रांति घट सकती है। और अच्छा ही हुआ कि इस अनुभव से गुजर गये। बिना इस अनुभव से गुजरे भी मुश्किल थी। न विवाह करते तो सोचते जिन्होंने विवाह किया है, अहह, कैसे मजे में हैं! जैसा अभी सोच रहे हो कि जिन्होंने विवाह नहीं किया, अहह, कैसे मजे में हैं! जो मिल जाता है, उससे आदमी अतृप्त हो जाता है और जो नहीं मिलता, उसमें आशा लगी रहती है। अच्छा ही हुआ कि एक झंझट से मिट गये, एक उपद्रव मन से शांत हो गया। यह तो अकल आ गयी। इतनी अकल विवाह ला दिया, यही कोई कम बात है! इतना होश आ आया कि फंस गये, नर्क में पड़ गये, मगर अपने हाथ से पड़े हो, तो बाहर निकल सकते हो, यह अनुभव कीमती हो सकता है। और जिस स्त्री को तुमने अपनी पत्नी बनाया है, खुद भी निकलो, उसे भी निकालो! इतना तो कर्तव्य है ही! जैसे तुम नर्क में गिरे हो और उसे भी गिराया है, ऐसे ही तुम भी निकलो और उसे भी निकालो। और मैं कहता हूं कि तुम अगर निकलो, तो वह भी निकल जाएगी।

मैंने सदा अनुभव किया है कि स्त्रियों के पास ज्यादा सूझ-बूझ है, स्पष्ट। क्योंकि स्त्रियां बुद्धि नहीं सोचती, हृदय से सोचती हैं। तर्क से नहीं सोचती, लेकिन उनका प्रेम पर्याप्त है उनको अंतर्दृष्टि देने में। अगर वह देखेगी तुम्हारा उज्जवल रूप, तुम्हारा, ध्यानस्थ, रूप, तुम्हारा उठता हुआ प्रकाश, तुम्हारा खिलता हुआ फूल, तो तुमसे पीछे नहीं रह जाएगी। तुमसे आगे भी जा सकती है।

अकेले मुक्त होने की चेष्टा तो बहुत लोगों ने की है--भाग गये जंगल--मगर मैं उनको भगोड़े मानता हूं, कायर मानता हूं। कोई भागने की जरूरत नहीं है। जहां हो वहीं मुक्त भी होओ और वहीं दूसरों को भी मुक्ति देने का उपाय करो। और तुम्हारा मुक्त होने से उनके लिए भी मार्ग खुलेगा। मगर तुम डरे, तुम अगर भयभीत रहे, तो तुम खुद भी बंधन में रहोगे और तुम दूसरे को भी बंधन में रखोगे।

आखिरी प्रश्नः भगवान, मैं प्रेम में पराजित होकर आपके पास आया हूं।

...सुनते हो, कच्छ-केसरी, अचल गच्छाधिपति! तुम विवाह में फंस कर यहां आ गये हो और पूछ रहे हो नर्क से कैसे छूटूं और यह प्रश्न सुनो--

मैं प्रेम में पराजित होकर आपके पास आया हूं। आत्मघात करने का विचार उठता है। अब जीना नहीं चाहता हूं। मैं क्या करूं क्या न करूं?

अविनाश! दो ही उपाय हैं। या तो समझने की चेष्टा करो। उसके लिए बहुत प्रगाढ? बुद्धि चाहिए। ध्यान से निखारो अपनी बुद्धि की तलवार को। ताकि तुम देख सको कि जिनको प्रेम में सफलता मिल गयी है, उनको क्या मिला है? कच्छ-केसरी से मिलो! और यह एक से एक कच्छ-केसरी मौजूद हैं। कुछ ऐसा नहीं कि तुम्हें खास उन्हीं से मिलना जरूरी है। अरे, किसी भी विवाहित पुरुष से मिलो! उसकी कथा सुनो, उसकी व्यथा सुनो। और तब तुम कहोगे, मैं धन्यभागी हूं, कि परमात्मा की कृपा है कि मैं बच गया। तब तुम यह न कहोगे कि मैं प्रेम में पराजित होकर आपके पास आया हूं। और तुम जिस स्त्री के साथ जीना चाहते थे, जरा पता तो लगाओ कि वह जिसके साथ जी रही है, उस पर क्या गुजर रही है? वह पागल हो गया, कि भाग कर त्रिदंडी साधु हो गया, कि जैन मुनि हो गया--कुछ पता तो लगाओ, उस पर क्या गुजर रही है! अपने ही आंसुओं में मत डुबे रहो! जरा आंखें खोलो!

तुम कहते हो कि पराजित हो कर आपके पास आया हूं। आत्मघात करने का विचार उठता है। यह विचार है प्रेम में पराजित व्यक्तियों को भी उठते हैं और प्रेम में जो जीत गये, उनके भी उठते हैं। आत्मघात का ही विचार।

मुल्ला नसरुद्दीन फांसी लगा रहा था। भूल से दरवाजा खुला छोड़ दिया। कमरे के भीतर जाकर कोई और चीज तो उसको मिली नहीं, टाई थी उसकी, सो उसने गले में टाई बांधी और सेंडेलियर से बांध कर लटकने ही जा रहा था कि पत्नी पहुंच गयी। और पत्नी ने कहा, यह क्या कर रहे हो? अरे, यह तुम्हारी सबसे कीमती टाई है! मरना ही हो तो कोई और मैं रस्सी ला दूं, यह टाई तो खराब न करो, किसी और के काम आएगी! यह सुनते ही कि किसी और के काम आएगी, वह फौरन नीचे उत्तर आया। उसने कहा, हमें नहीं मरना। कौन है वह जिसके काम आएगी? ।

इन विचारों में क्या रखा है!

फिर एक दफा आत्महत्या कर रहा था। तो उसने दरवाजा बंद कर लिया, क्योंकि पहली दफा पत्नी ने आकर गड़बड़ कर दी थी। उसने टाई का सवाल उठा दिया। कि टाई तो खराब न करो! अरे, मरना है तो मर जाओ!...स्त्रियों का तो गणित ही अलग उसको पड़ी है टाई की कि अभी तो खरीदी है, नई की नई टाई! अरे, आदमी का क्या है, आदमी तो हजार मिल जाते हैं, मगर टाई! यह नाहक खराब कर रहा है!

सो दरवाजा बंद कर लिया था। बहुत उसने दरवाजा पीटा और मुल्ला कहे कि नहीं खोलेंगे। हमने तो मरने का पक्का विचार कर लिया है।...विचार करना पड़ता है मरने का! अरे, जिसको मरना है वह मर जाता है! तुम यहां, आते, अविनाश, पूछने! इतनी दूर की यात्रा करते हो! जिस ट्रेन में आए, उसी के नीचे लेट गये होते! न-मालूम कहां से चले आ रहे हो, कितनी देर से यात्रा करके, कितने मौके बीच में आए होंगे--पहाड़ियां पड़ी होंगी, कुएं मिले

होंगे, ट्रेन मिली होंगी, बसे मिली होंगी, और एक से एक पहुंचे हुए सरदार ट्रक चलाए जा रहे हैं--कितने अवसर चूक कर तुम इधर आए! विचार से कुछ नहीं होता, भइया, कुछ करके दिखाना पड़ता है! विचार तो बहुत लोग करते हैं।

मनोवैज्ञानिक कहते हैं, ऐसा आदमी खोजना कठिन है जिसने कम से कम जिंदगी में चार बार मरने का विचार न किया हो। मगर विचार विचार है। अच्छा विचार है, नेक विचार है, मगर विचार का कोई परिणाम तो होता नहीं। लोग सोचते ही रहते हैं। सोचते से राहत मिलती है कि अहह, कैसे गजब का विचार किया! प्रेम में पराजित हो गये हैं, देखो, मजनूं को पराजित कर दिया, आत्महत्या का विचार कर रहे हैं! कि देखो फरहाद को पानी पिला दिया; आत्महत्या का विचार कर रहे हैं, अब और क्या चाहिए! इतनी बड़ी कुर्बानी! किया-धरा कुछ नहीं है अभी, सोच रहे हैं।

सो मुल्ला नसरुद्दीन, तीन घंटे उसकी पत्नी दरवाजा पीटे, वह कहे हम विचार करते हैं, हम तो मरेंगे। वह मेरे पास आयी। मैंने कहा, तू बिलकुल पागल है! कोई तीन घंटे लगते हैं मरने मैं--सोचने में, विचार करने में? सातवीं मंजिल पर रहते हो कूद ही पड़ता। छोड़ो फिकिर! मगर वह बोली कि नहीं, एक दफा तो मैंने बचा लिया था, अब कहीं कुछ कर ही न बैठे! फिर से करने लगा है।

तो मैं गया।

तो मैंने दरवाजा खटखटाया, मैंने कहा कि दरवाजा खोलो! तुम्हें चार घंटे हो गये, अभी तक तुम कोई उपाय नहीं खोज पाए, तो मैं तुम्हें रास्ता बताए देता हूं कि कैसे मरना! यह उसने नहीं सोचा था कि कोई रास्ता बताने आएगा मरने का। जो भी आए थे, मुहल्ले-पड़ोस के लोग, उन्होंने कहा, भाई, ऐसा मत करो! अरे, बाल-बच्चों का ख्याल करो, पत्नी का ख्याल करो!...और पत्नी बाल-बच्चों के कारण ही तो वह मरने जा रहे हैं, इनका क्या खाक ख्याल करे! वे उसको और जोश चढ़ा रहे थे। और जले पर नमक छिड़क रहे थे।...मैंने कहा कि तुम्हें मरना है, बहुत अच्छी बात है। मरने में कोई बुराई नहीं है। जरूर मर जाओ। मगर कोई ढंग से! तीन-चार घंटे लगा रहे हो, इतने में पुलिस आ जाएगी, कुछ भी, पकड़ गये, झंझट में पड़ोगे--आत्महत्या जुर्म है! कोई शीघ्र व्यवस्था करनी चाहिए। मैं तुम्हें रास्ता बताता हूं। दरवाजा खोलो!

अब मुझे वह कैसे कहे कि दरवाजा नहीं खोलते, कि हमें तो मरना है! दूसरों से कह सकता था। मैं तो रास्ता ही बता रहा था। उसने दरवाजा खोला। देखा मैंने कि क्या कर रहा था वह। दोनों कंधे में उसने रस्सी बांध ली थी। टाई तो पत्नी ने उसी दिन से सब उठा कर अलग रख दी थीं। मैंने कहां, कंधों में रस्सी बांध कर तुम सेंडेलियर से लटका कर फर्श पर खड़े हो, कैसे मरोगे? मैंने कहा, गले में बांध, पागल! उसने कहा, मैंने पहले गले में बांधी थी मगर उससे बड़ा जी घुटता है।

जी तो घुटेगा ही। जब आत्महत्या करोगे, तो जी नहीं घुटेगा!

तुम पूछते हो, अविनाश, कि मैं प्रेम में पराजित होकर आपके पास आया हूं। आत्मघात का विचार उठता है। मैं अब जीना नहीं चाहता हूं। और फिर भी पूछ रहे हो: "मैं क्या करूं, क्या न करूं?' अरे, अब जब जीना ही नहीं है, तो अब क्या पूछना! अभी जिनको जीना है, उनको दो। अब जैसे ये कच्छ-केसरी हैं। अभी इनको जीना है, इनको पूछने दो। तुम्हें तो जीना ही नहीं है, अब पूछ कर क्या करोगे? और पूछना ही हो तो मरने के बाद कोई मिल जाए, उससे पूछ लेना।

नहीं, मरना वगैरह तुम्हें नहीं है। तुम सिर्फ अपने अहंकार को पोषित कर रहे हो कि देखो, मैं प्रेम पर मरने के लिए तैयार हूं और अगर तुम यहां मरने के लिए ही आए हो, तो मैं जरूर तुम्हें मरने की ऐसी कला बताता हूं कि फिर जन्म लेना ही न पड़े। क्योंकि नहीं तो मरे, फिर जन्म लेना पड़ेगा। फिर कोई उपद्रव होगा। जन्म हुआ तो उपद्रव की शुरुआत है। कुछ न कुछ होगा। प्रेम में असफल होओगे, कि सफल होओगे, हर हाल में मरने की बात उठेगी। धन मिलेगा तो तो फांसी लगेगी, नहीं मिलेगा तो फांसी लगेगी। जनम हो गया कि फिर उपद्रव है। इसीलिए तो इस देश ने सदियों-सदियों से यह निचोड़ निकाला कि आवागमन से छुटकारा चाहिए। अगर ख्याल, रखना, पहले आना, उससे छुटकारा हो जब जाने से छुटकारा होता है। जाने के लिए तो कोई भी उत्सुक है, मगर फिर आ जाओगे। कुछ ऐसा उपाय होना चाहिए, जिससे कि फिर आना ही न पड़े। उसको ही मैं संन्यास कहता हूं, ध्यान कहता हूं। वह असली मरना है। अहंकार का मरना असली मृत्यु है।

आत्मा तो मर सकती नहीं। तुम लाख उपाय करो, आत्मा को तो कोई कभी मार सका नहीं। कृष्ण ठीक कहते हैं; न हन्यते हन्यमाने शरीर। शरीर को मिटा डालो, तो भी वह नहीं मिटती है। जला डाला, वह नहीं जलती है। छेद डालो अस्त्र-शस्त्रों से, वह नहीं छिदती है। आत्मा तो अमर है। इसलिए उसको तो मारने का कोई उपाय नहीं है। लेकिन अहंकार मारा जा सकता है। वही जन्म लेता है, वही मरता है। वही आवागमन है। वही तुम्हें भरमाए रखता है, भटकाए रखता है।

अभी भी तुम कहे हो कि मैं प्रेम में पराजित होकर लौटा, मगर तुम गलत कह रहे हो। तुम अहंकार में पराजित हुए हो। प्रेम तुम क्या खाक जानोगे! प्रेम जानोगे कैसे? और प्रेम जाना है, वह कभी पराजित हुआ ही नहीं। क्योंकि प्रेम को कोई उपाय ही नहीं है हराने का। तुमने किसी को प्रेम किया, यह तुम्हारा हक था। उसने स्वीकार किया या नहीं किया, यह उसका हक है। तुम्हारे प्रेम करने को वहां रुकावट है? तुम चांद को प्रेम करते हो, इसका मतलब यह थोड़े ही है कि चांद को जेब में रखना पड़ेगा तभी प्रेम जाहिर होगा। तुम फूलों को प्रेम करते हो, इसका यह मतलब थोड़े ही है उनको तोड़ कर और गुलदस्ता बनाना पड़ेगा तभी प्रेम जाहिर होगा।

जार्ज बर्नार्ड शा के पास एक मित्र फूलों का एक गुलदस्ता बना कर ले आया। जार्ज बर्नार्ड शा ने कहा, क्षमा करें, मैं यह स्वीकार नहीं मरूंगा। उसने कहा, मैं तो सोचा कि आप सौंदर्य के परखी हैं, इतने बड़े कलाविद, आपको फूलों में रस होगा, ये बड़े फूल हैं गुलाब के, बड़े

सुंदर फूल हैं, इसलिए तो इनका मैं गुलदस्ता बना लाया हूं कि आपकी टेबल पर सजा दूं। बनार्ड शा ने कहा कि मुझे छोटे बच्चे भी प्यारे लगते हैं, इसका क्या मतलब उनकी गर्दनें काटकर गुलदस्ता बना लूं? अगर तुम फूलों को प्रेम करते हो तो तुम काट कैसे सके, पहले यह मुझे जवाब दो! तुम प्रेम वगैरह नहीं करते हो। प्रेम किया होता तो फूल जिंदा था वृक्ष पर, उसे तोड़ने का कोई सवाल न था। फिर फूल को जिसने प्रेम किया, क्या जरूरत है कि वह फूल तुम्हारी बगिया में ही खिले तभी तुम प्रेम करोगे! वह किसी की भी बगिया में खिले। वह खिले, प्रेम की यही आकांक्षा होगी।

मगर प्रेम कब्जा चाहता है, मालकियत चाहता है। मालकियत प्रेम नहीं है, अहंकार है। हां, तुम चाहो तो अहंकार के जहर पर प्रेम की थोड़ी-सी पतली शक्कर की पर्त जमा दो, वह बात और है। मगर भीतर जहर भरा हुआ है। पराजित होने की भाषा प्रेम की भाषा ही नहीं है। प्रेम ने कभी पराजित होना जाना ही नहीं है। प्रेम तो सदा जीता हुआ है। और जो प्रेम में जीया है, वह जीत ही जीत में जीया है। उसकी कोई हार नहीं है। हारता है अहंकार। क्योंकि अहंकार जीतना चाहता है। प्रेम तो जीतना ही नहीं चाहता, हारेगा कैसे? जहां जीत की आकांक्षा नहीं है, वहां हार कैसे हो सकती है?

प्रेम तो जिसे प्रेम देता है, उसे स्वतंत्रता देता है। अगर तुमने किसी स्त्री को चाहा और उस स्त्री ने किसी और को चाहा और वह उसके साथ आनंदित है, तो तुम प्रसन्न होओगे कि वह आनंदित है। तुम उस पर अपने को थोपोगे नहीं। लेकिन हम बड़े अजीब लोग हैं। हम हमेशा थोपने के लिए आतुर हैं। और ऐसा नहीं है कि प्रेमी प्रेमिकाओं पर थोप रहे हैं, प्रेमिकाएं प्रेमियों पर थोप रही हैं, हर कोई हर दूसरे पर थोप रहा है। मां-बाप भी बच्चों पर थोपते हैं। अगर तुम्हारा बेटा किसी लड़की के प्रेम में पड़ जाए, बस, खतरा हो गया। लड़की तुम्हें चुननी चाहिए। तुम जिस लड़की को चुनो, उसे तुम्हारा बेटा प्रेम करे। लड़का चुने या तुम्हारी लड़की चुने, बस, चोट लगी! चोट किसको लग रही है? तुम लड़के और लड़की की खुशी में उत्सुक हो या अहंकार की यात्रा में? यहां सब अपने अहंकार को सजाने में लगे हुए हैं। नाम कुछ भी दो, असलियत कुछ और है। तुम अभी प्रेम जानते ही नहीं। तुमने अगर प्रेम जाना होता तो आत्मघात का प्रश्न ही नहीं उठता था। जिसने प्रेम जाना, उसके जीवन में तो जीवन की अमरता, जीवन का अमृत स्वरूप प्रकट होने लगेगा।

मगर एक लिहाज से तुम ठीक जगह आ गये, क्योंकि मैं तुम्हें यहां असली आत्मघात सिखा सकता हूं। अहंकार मर जाए, यह असली आत्मघात है। क्योंकि फिर इस जगत में आना नहीं होता लेकिन तुम्हें तो कठिनाई होगी। तुम तो इस कवि से राजी होओगे।

मेरे हमनफस, . . .
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा, . . .
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा
मुझे दोस्त बनके दगा न दे...
मेरे हमनफस, मरे हमनवा

मुझे दोस्त बनके दगा न दे
मैं हूं सोजे-इश्क से जांबलब
मुझे जिंदगी की दुआ न दे
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा...
मैं हूं सोजे-इश्क से जांबलब
मुझे जिंदगी की दुआ न दे
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा...
मेरे दागे-दिल से है रौशनी...
मेरे दागे-दिल से है रौशनी
इसी रोशनी से है जिंदगी
मुझे डर है ये मेरे चारागर...
मुझे डर है ये मेरे चारागर
ये चराग तू ही बुझा न दे
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा...
मैं गमे-जहां से निढाल हूं...
मैं गमे-जहां से निढाल हूं
कि शरापादर्द-मलाल हूं
जो लिखे हैं मेरे नसीब में...
जो लिखे हैं मेरे नसीब में
वो अलम किसी को खुदा न दे
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा...
कभी जाम लब से लगा दिया...
कभी जाम लब से लगा दिया
कभी मुस्कुराके हटा दिया...
कभी जाम लब से लगा दिया
कभी मुस्कुराके हटा दिया
तेरी छेड़छाड़ ये साकिया...
तेरी छेड़छाड़ ये साकिया
मेरी तिश्नगी को बुझा न दे...
तेरी छेड़छाड़ ये साकिया
मेरी तिश्नगी को बुझा न दे
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा...
मुझे छोड़ दे मेरे हाल पर...
मुझे छोड़ दे मेरे हाल पर

तेरा क्या भरोसा है चारागर
ये तेरी नबाजिशे-मुख्तसर...
ये तेरी नबाजिशे-मुख्तसर
मेरा दर्द और बढ़ा न दे
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा...
मेरा अज्म इतना बुलंद है
कि पराये शोलों का डर नहीं
मुझे खौफ...
मुझे खौफ अतिशे-गुल से है..
मुझे खौफ अतिशे-गुल से है
ये कहीं चमन को जला न दे
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा...
वो उठे हैं लेके गुमो शुबू...
वो उठे हैं लेके गुमो शुबू
अरे ओ "शकील'...
अरे ओ "शकील' कहां है तू
तेरा जाम लेने की बज्म में...
तेरा जाम लेने की बज्म में
कोई और हाथ बढ़ा न दे
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा
मुझे दोस्त बनके दगा न दे...
मुझे दोस्त बनके दगा न दे
मैं हूं सोजे-इश्क से जांबलब...
मैं हूं सोजे-इश्क से जांबलब
मुझे जिंदगी की दुआ न दे
मेरे हमनफस,...
मेरे हमनफस, मेरे हमनवा

मैं तो तुम्हें अमृत जीवन का ही आशीष दे सकता हूं। तुम तो आत्मघात का विचार कर रहे हो, मैं तुम्हें अमृत की कीमिया ही दे सकता हूं मैं तुम्हें ऐसी जीवन का द्वार दिखा सकता हूं, जो शाश्वत है। और ऐसे प्रेम का द्वार दिखा सकता हूं, जो पराजय नहीं जानता। लेकिन तुम्हें अपनी व्यर्थ की धारणाओं से, जो तुमने मूर्च्छा में पकड़ रखी हैं, मुक्त हो जाना होगा। पहली तो बात अभी समझो कि तुमने प्रेम किया नहीं। प्रेम करना साधारण बात नहीं है। प्रेम वही कर सकता है जो पहले अहंकार को गिरा दे। जहां अहंकार है वहां कैसा प्रेम! अहंकार के साथ प्रेम असंभव है। दोनों का सह-अस्तित्व न कभी हुआ है, न हो सकता है। प्रेम करना

है? पहले अहंकार को गिराओ। और अहंकार को गिराने की तलवार ध्यान है। काट डालो अहंकार का सिर ध्यान से। और फिर तुम्हारे जीवन में प्रेम के झरने फूटेंगे। और वे झरने पराजित नहीं होते हैं। और वे झरने तुम्हारे भीतर ऐसे तलाश न भरेंगे, निराश न भरेंगे। वे झरने तुम्हारे भीतर ऐसा उल्लास भर देंगे, जिसकी कोई सीमा नहीं है। वे तुम्हारे जीवन को उत्सव में रूपांतरित कर देंगे।

अगर आत्मघात तक की तैयारी है, तो कम से कम संन्यास की तो हिम्मत करो। अरे, जब मरने को ही तैयार हो, तो इतना तो करो कि संन्यास में उतर जाओ! जो मरने को तैयार है, अब उसे क्या डर? मरता क्या न करता! इतना तो कर लो! संन्यासी हो जाओ, अविनाश! और मैं तुम्हीं सच में ही अविनाश होने का मार्ग दे सकता हूं।

मगर इन टुच्ची बातों में न पड़ो कि प्रेम में पराजित हो गये, आत्मघात का विचार उठ रहा है, मारना चाहते हो, जीने की इच्छा न रही! अभी जाना क्या है तुमने? अभी जीवन को पहचाना कहां? अभी प्रेम से परिचय नहीं। इस सब के लिए कुछ जीवन की कला सीखनी होती है। जीवन को कुछ निखार देना होता है। जीवन हमें मिलता है ऐसे जैसे अनगढ़ पत्थर। फिर उस पर छेनी उठा कर बहुत-से व्यर्थ हिस्से पत्थर के काट डालने पड़ते हैं। तब उसमें कभी बुद्धत्व की मूर्ति प्रकट होती है।

हम सब अनगढ़ पत्थर की तरह पैदा होता हैं, मगर अगर चाहें तो बुद्ध होकर विदा होते हैं। जो बुद्ध होकर विदा होता है, वह अनंत में विलीन हो जाता है। यह उपनिषद का सूत्र उसी बुद्धत्व के लिए सही है:

सत्यं परम परम सत्य।

सत्य है परम है सत्य।

सत्येन न स्वर्गाल्लोकाच च्यवन्ते कदाचन।

जो उठ गया उस परम सत्य तक, पा लिया उसने स्वर्ग जहां से गिरना असंभव है। सतां हि सत्य।

वैसे व्यक्ति का अस्तित्व ही सत्य है। वैसे व्यक्ति की श्वास-श्वास सत्य है। वैसे व्यक्ति का जीवन भागवत है। वह बोले तो भगवदगीता। वह चुप रहे तो उसके मौन में भी संगीत है।

तस्मात्सत्ये रमन्ते।

वह उठता है तो सत्य, बैठता है तो सत्य, सोता है तो सत्य। वह सत्य में ही रमण करता है।

आज इतना ही।

९ अक्तूबर १९८०; श्री रजनीश आश्रम, पूना

जैसा हूं, परम आनंदित हूं

पहला प्रश्नः भगवान, एक पत्रकार-परिषद में भारत के भूतपूर्व प्रधान मंत्री श्री मोरारजी देसाई ने कहा है:"आचार्य रजनीश के आश्रम में आने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, क्योंकि आचार्य रजनीश का आंदोलन अत्यंत खतरनाक और घातक ही नहीं, वरन भारतीय धर्म और संस्कृति को बदनाम करने वाला भी है।' श्री देसाई ने गुजरात के मुख्यमंत्री श्री माधवसिंह सोलंकी के इस वक्तव्य के विरुद्ध अपनी तीखी प्रतिक्रिया की है कि "किसी भी धार्मिक नेता को भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में कहीं भी आश्रम बनाने की स्वतंत्रता है' और उन्होंने कहा कि "बुरे कामों को बढ़ावा देने के लिए इस स्वतंत्रता का उपयोग नहीं किया जा सकता है। मैंने तो अपने शासन-काल में आचार्य रजनीश की गतिविधियों की जांच की भी आदेश दिया था।' श्री देसाई ने यह भी कहा कि "आचार्य रजनीश कभी भी कच्छ में अपना आश्रम स्थापित नहीं कर सकेंगे, यदि कच्छ की जनता इकट्ठी होकर उनका विरोध करने का साहस करे।'
और अंत में श्री देसाई ने कहा कि "आचार्य रजनीश मुझे काम-दमित मानते हैं और मेरी आलोचना लगातार करते रहते हैं, परंतु मैं उनकी यह आलोचना आशीर्वाद की तरह लेता हूं।'
भगवान, क्या आप श्री मोरारजी देसाई के इस प्रलाप पर कुछ कहने की कृपा करेंगे!

सत्य वेदांत! पहली बात, श्री मोरारजी देसाई को ऐसी भ्रांति है जैसे गुजरात उनकी कोई बपौती है। कुछ ही दिन पहले उन्होंने कहा कि "जब तक मैं जिंदा हूं, तब तक गुजरात में शराबबंदी के नियम को शिथिल नहीं किया जा सकता है।' जैसे एक व्यक्ति का आग्रह सारी जनता पर थोपना अनिवार्य है! श्री मोरारजी देसाई कौन है, जो कहें कि मुझे कच्छ में आने की अनुमति नहीं दी जा सकती! उनसे अनुमति मांग भी कौन रहा है! अपने मुंह मियां मिट्ठू! उनकी अनुमति की मुझे जरूरत है कच्छ आने के लिए!!
और इस तरह की भाषा बोलना शुद्ध फैसिज्म है। यह भाषा लोकतंत्र के प्रति समादर नहीं है, स्वतंत्रता के प्रति समादर नहीं है। यह भाषा तानाशाही की भाषा है।
उन्होंने कहा कि "आचार्य रजनीश का आंदोलन अत्यंत खतरनाक है।' यह सच है। यह आंदोलन खतरनाक है। और इसीलिए तो दकियानूसियों की जड़े हिल गयी हैं। यह निश्चित खतरनाक है! क्योंकि भारत की जड़ता को तोड़ने वाला और कोई आंदोलन नहीं है। यह खतरनाक है कि भारत में जो सड़ी-गली लाशें वर्षों से इकट्ठी हो रही हैं, हजारों वर्षों से, उनको जब तक हम जला कर राख न कर दें, तब तक भारत में जीवन का अंकुरण नहीं हो सकता है। यह वैसे ही खतरनाक है जैसे कि व्यक्ति को दवा देना निश्चित ही उन कीटाणुओं

के लिए तो खतरनाक है जो बीमारी पैदा कर रहे हैं। लेकिन उस व्यक्ति के लिए औषधि है। उसके जीवन की संभावना उसी औषधि में हैं।

तो भारत के धर्मगुरुओं, पोंगापंथियों, दकियानूसी परंपरावादियों--इन कीटाणुओं के लिए जरूर मैं जो कह रहा हूं वह खतरनाक है। लेकिन यही कीटाणु तो भारत के प्राण खाए जा रहे हैं। यही तो भारत का कैंसर हैं। उन्होंने ही तो इस देश को इतना दीन, दुर्बल, पतित, सारे जगत में अपमानित, अनादृत कर दिया है। और स्वभावतः वे सब एकजुट हो कर मेरा विरोध करेंगे। उनका विरोध समझ में आता है। लेकिन वे थोड़े-से ही लोग हैं--न्यस्त स्वार्थ, उनको खतरा है। अगर मैं सच हूं, अगर जो मैं कह रहा हूं वह है, तो निश्चित ही अंधेरे की मौत आ गयी।

उन्होंने कहा कि "खतरनाक और घातक ही नहीं, वरन भारतीय धर्म और संस्कृति को बदनाम करने वाला है।' जैसे कि धर्म भी भारतीय होता है। तो अगर धर्म भारतीय होगा, तो फिर अधर्म अभारतीय होगा। तो फिर जो भारत में नहीं है, वह सब अधर्म है। और फिर जो भारत में है, वह सब धर्म है। जैसे संस्कृति भारतीय होती है!

सभ्यता बांटी जा सकती है भूगोल में, क्योंकि सभ्यता बाह्य आचरण की व्यवस्था है। लोगों के कपड़े पहनने का ढंग, लोगों के भोजन का ढंग, लोगों के उठने-बैठने का सलीका, शिष्टाचार--यह "सभ्यता' शब्द को ख्याल में रखना, उसका अर्थ होता है: सभा में बैठने की योग्यता। दूसरों के साथ बैठने की योग्यता। इसलिए हम किसी संस्था के सदस्य को सभ्य कहते हैं। सभ्य का अर्थ है: वह इस योग्य है कि चार लोगों के बीच बैठ सके।...सभ्यता बाहरी नाता है। संस्कृति आत्मिक परिष्कार है।

संस्कृत व्यक्ति तो थोड़े-से ही हुए हैं दुनिया में। बुद्ध, महावीर, कृष्ण, मुहम्मद, नानक, कबीर, जीसस, जरथुस्त्र, लाओत्सू--थोड़े-से ही लोग सुसंस्कृत हुए हैं। अभी पृथ्वी इतनी धन्यभागी कहां हुई! हो सकती है, मगर मोरारजी देसाई जैसे लोग बाधा हैं।

इस भेद का स्पष्ट समझ लो!

सभ्यता भौगोलिक होती है--होगी ही!--लेकिन संस्कृति आध्यात्मिक होती है। और अध्यात्म के लिए कोई नक्शे पर बंधी हुई रेखाएं काम नहीं आती। अध्यात्म का कोई नक्शा नहीं। अध्यात्म की कोई राजनीति नहीं। भारत में नमस्कार करते हैं, दोनों हाथों को जोड़ कर नमस्कार करते हैं। पश्चिम में लोग नमस्कार करते हैं, हाथ को एक-दूसरे के पकड़ कर नमस्कार करते हैं। अफ्रीका का एक कबीला जब नमस्कार करता है तो एक-दूसरे की जीभ मिला कर नमस्कार करते हैं। यह सभ्यता है। यह, इसका कोई आध्यात्मिक मूल्य नहीं है कि तुम हाथ मिलाते हो, कि हाथ हिलाते हो, कि जीभ मिलाते हो, कि नाक रगड़ते हो--नाक रगड़ने वाले लोग भी हैं। बर्मा में एक कबीला जब मिलता है तो एक-दूसरे के नाक रगड़ते है। इतना तय है कि जब दूसरे से हम मिलते हैं तो कहीं से बात शुरू करनी पड़ेगी। फिर कहां से तुम तय करते हो, यह भूगोल से तय होता है, मौसम से तय होता है, वातावरण से तय होता है, परंपरा से तय होता है।

लेकिन संस्कृति बात और है! बुद्ध को नानक के साथ बिठाओ, कि कबीर के साथ, कि बहाऊद्दीन के साथ, कि संत फ्रांसिस के साथ, कि इकहॉर्ट के साथ, वे सभी एक तरह के लोग होंगे। उन सबके भीतर का कमल खिला है। उन सब के भीतर सुगंध उड़ रही है--एक ही परमात्मा की सुगंध। उस सुगंध का नाम संस्कृति है। वह संस्कृति भारतीय और अभारतीय नहीं होती। और उस संस्कृति को पाने की प्रक्रिया और विज्ञान का नाम धर्म है। इसलिए धर्म न हिंदू होता है, न मुसलमान होता है, न ईसाई होता है। धर्म तो सिर्फ धर्म होता है। जैसे विज्ञान सिर्फ विज्ञान होता है।

तुम सौ डिग्री पर पानी गरम करो तो पानी भाप बनता है; यह वैज्ञानिक नियम है। इसमें कोई अपवाद नहीं है। फिर सिक्ख करे गरम, कि जैन करे गरम, कि बौद्ध करे गरम, इससे कुछ फर्क न पड़ेगा, पानी सौ डिग्री पर ही भाप बनेगा। ब्राह्मण करे कि शूद्र करे, कि क्षत्रिय करे कि वैश्य करे, कुछ पानी अपना नियम नहीं बदलेगा। पानी का नियम प्राकृतिक है। वह तुम्हारी इन मूढताओं में न फंसेगा, कि तुम ब्राह्मण हो तो जरा जल्दी गरम हो जाऊं। कि ब्राह्मण देवता गरम कर रहे हैं, कि जल्दी भाप बन जाऊं! कि शूद्र गरम कर रहा है, क्या जल्दी पड़ी है, दो सौ डिग्री पर भाप बनूंगा, शूद्र है, इसकी क्या फिक्र करनी! न वेद जानता है, न उपनिषद जानता है, छूने योग्य भी नहीं है यह, इसकी मुझे क्या पड़ी! नहीं, प्रकृति का नियम किसी के लिए अपवाद नहीं है; सबके लिए एक जैसा है।

विज्ञान प्रकृति का नियम खोजता है और धर्म आत्मा का नियम। जब प्रकृति का नियम भी एक होता है, तो क्या तुम सोचते हो चेतना के नियम अलग-अलग होंगे? असंभव! जब पदार्थ का नियम तक एक होता है, तो परमात्मा का नियम अलग-अलग होगा! हां, भाषा अलग हो सकती है। जीसस बोलेंगे तो अरेमैक भाषा में बोलेंगे, और बुद्ध बोलेंगे तो पाली में बोलेंगे, और महावीर बोलेंगे तो प्राकृत में, और याज्ञवल्क्य बोलेंगे तो संस्कृत में; और नानक अपनी भाषा, कबीर अपनी भाषा, सब अपनी भाषा में बोलेंगे। मगर जो बोला जा रहा है, वह एक है। अंगुलियां अलग-अलग, लेकिन जिस चांद की तरफ इशारा किया जा रहा, वह एक। इक ओंकार सतनाम। उसमें कुछ भेद नहीं है।

इसलिए ध्यान रखना, जो व्यक्ति धार्मिक है, न तो हिंदू है, न मुसलमान है, न सिक्ख है, न ईसाई है। जो व्यक्ति धार्मिक है, उसका धार्मिक होना पर्याप्त है। ये विशेषण व्यर्थ हो गये। वह इनके, विशेषणों के पार जा चुका। ये विशेषण बहुत पीछे छूट गये। इनका अब कोई मूल्य नहीं रहा। ये सब बाहर व्यवहार के नाते-रिश्ते हैं। अंतरात्मा में कौन हिंदू है, कौन मुसलमान है, कौन ईसाई है? जब तुम समाधि की गहराई में पहुंचोगे और तुम्हारे भीतर ध्यान का दीया जलेगा, तो उस रोशनी में क्या भारतीय बचेगा? कि जापानी बचेगा, कि चीनी बचेगा?

मैं धर्म की बात कर रहा हूं और इसीलिए श्री मोरारजी देसाई जैसे लोगों को खतरा मालूम होता है। क्योंकि इनकी बुद्धि तो बाहर से बंधी है। इन्हें भीतर का तो कुछ पता नहीं। जिंदगी भर कौड़ियां जुटाने में गंवायी है। जिंदगी भर पद-लिप्सा में भटके रहे हैं। इन्हें कुछ भीतर के

परमपद का तो कोई अनुभव नहीं है। ये क्या खाक समझेंगे धर्म! और क्या खाक समझेंगे संस्कृति! मगर शब्दों को तो कोई भी सीख लेता है। तोते भी सीख लेते हैं! और प्यारे-प्यारे शब्द दोहराने लगते हैं गायत्री बोलते हैं, नमोकार मंत्र बोलते हैं। जपुजी सिखा दो! तोता तो कुछ भी बोलने लगेगा।

और ये मोरारजी देसाई एक तोते से ज्यादा नहीं हैं। इनका कोई अनुभव नहीं है। इन्हें ध्यान का ही कोई अनुभव नहीं है।

कुछ ही दिन पहले इन्होंने स्वीकार किया था कि मैंने आचार्य रजनीश से ध्यान की प्रक्रिया पूछी थी। प्रक्रिया वही पूछता है जिसको ध्यान का पता नहीं है। और यह भी स्वीकार किया था अपने वक्तव्य में कि उन्होंने जो प्रक्रिया बतायी थी, मैं कर नहीं सका, क्योंकि अब मेरी उम्र काफी हो गयी।...प्रधानमंत्री बनने के लिए उम्र काफी नहीं हुई है! अभी फिर से प्रधानमंत्री बनने को तैयार हैं! और ध्यान करने के लिए उम्र काफी हो गयी। आदमी भी क्या-क्या बहाने खोजता है! कैसे-कैसे अपने को धोखा देता है!

जवानों से कहो तो वे कहते हैं कि ध्यान बुढापे में करेंगे, क्योंकि अभी तो हम जवान है। अभी क्या ध्यान करना! शास्त्रों में ही कहा है कि धर्म और ध्यान का समय तो चौथी अवस्था है--चौथा आश्रम। पचहत्तर साल के बाद करेंगे। और जब मोरारजी देसाई से मेरी ध्यान के संबंध में बात हुई थी, तो वे पचहत्तर साल के ही थे। और मैंने उनसे कहा भी कि यही तो वक्त है। जवानों से कहता हूं तो वे बहाना खोजते हैं कि पचहत्तर साल के बाद शास्त्रों में कहा हुआ है। पचहत्तर साल के बाद ध्यान, समाधि, धर्म संन्यास। और आप कहते हैं कि अब मेरी उम्र न रही! बूढे कहते हैं, अब हम कैसे ध्यान करें, उम्र न रही; जवान कहते हैं, अभी तो उम्र है, हम कैसे ध्यान करें? ध्यान किसी को भी नहीं करना है। जिसको ध्यान करना है, उसके लिए उम्र का कोई सवाल ही नहीं उठता है।

अगर मोरारजी देसाई कब्र में भी पड़े हों और खबर आ जाए कि फिर से प्रधानमंत्री बनना है। तो उठकर खड़े हो जाएंगे। एकदम अपना चूड़ीदार पाजामा चढ़ाने लगेंगे, गांधी टोपी सम्हालकर लगा लेंगे, चर्खा उठा लेंगे--कि राजी हूं! लेकिन ध्यान? तो उम्र नहीं। और जब तुमने ध्यान ही नहीं जाना, तो तुम क्या धर्म जानोगे! ध्यान का ही तो आत्यंतिक अनुभव धर्म यानी स्वयं जीवन की आंतरिक अनुभूति। धर्म शास्त्रों में नहीं है, स्वयं में है। धर्म है भीतर का स्वभाव। और उस स्वभाव को जिसने जान लिया, वही सुसंस्कृत है। क्योंकि जब क्रांति घट जाती है। तब उसे अपने आचरण को सम्हालना नहीं पड़ता। तब उसका आचरण अपने से सम्हल जाता है। जब उसे सोच-सोच कर नहीं चलना पड़ता कि क्या ठीक है और क्या गलत है। फिर तो वह जो कहता है, वही ठीक होता है। फिर उसे कभी पश्चात्ताप नहीं होता।

उपनिषद के इस वचन को समझो! तैत्तिरीय उपनिषद में यह प्यारा वचन है--

यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।
आनंद ब्रह्मणो विद्वान न बिभेति कुतश्चन।।

एत हि वाव न तपेति "किम अहम साधुनाकरवम।
किम अहं पापम अकरमवम' इति।।
वह लोक है धर्म का लोक जहां पहुंच पाने से मन साथ वाणी लौट आती है। ध्यान में तो मन को छोड़ देना होता है, क्योंकि अ-मनी दशा ध्यान है। नानक का शब्द है: अ-मनी। मन के पार हट जाना होता है, मन से ऊपर उठ जाना होता है; मन को पीछे छोड़ देना होता है। और मन छूटा तो वाणी छूट जाती है, क्योंकि मन की ही प्रक्रिया है वाणी। मौन आया तो ध्यान आया। न वहां मन है, न वाणी है।
लेकिन जब कोई ब्रह्म को अनुभव कर लेता है, तो पुनः मन लौट आता है और वाणी लौट आती है। क्योंकि जब जो जाना है, उसे दूसरों से संवादित करना होगा, निवेदन करना होगा। फिर मन को नया काम मिलता है। फिर वाणी को नयी व्यवस्था मिलती है। फिर गीता फूटती है, कुरान जन्मता है। फिर धम्मपद उठता है। जिस मन को छोड़ दिया था, जिस वाणी को पीछे छोड़ दिया था, अब उसको फिर नया काम मिलता है। पहले मन मालिक था, अब मालिक आत्मा है, मन गुलाब है। पहले वाणी तुम्हारे बस में न थी, विचार तुम्हारे ऊपर हावी थे, तुम कहो कि बंद हो जाओ तो बंद न होते थे, तुम कहो कि चलो तो चलते न थे, उनकी मौज थी, वे तुम्हीं को घसीटते थे, तुम्हारी कोई लगाम न थी, अब तुमने अपनी मालकियत पा ली, तुम अपने स्वामी हुए। अब तुम वापिस मन का उपयोग कर सकते हो, अब वाणी का उपयोग कर सकते हो। लेकिन अब मन संसार बनाएगा। अब मन सत्य की उदघोषणा करेगा। अब मन उठे हुए विचार विक्षिप्तता न लाएंगे, बल्कि तुम्हारी विमुक्ति को गुनगुनाएंगे; तुम्हारी विमुक्ति का संदेश पहुंचाएंगे।
सूत्र प्यारा है--
यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा यह।
"उस परम ज्ञान में पहुंच जाने के बाद मन के साथ वाणी लौट आती है। उस ब्रह्म के आनंद का जो अनुभव कर लेता है, वह किसी से डरता नहीं।" डरने का कारण ही नहीं रह जाता।
हम डरते क्यों हैं?
हम डरते इसलिए हैं कि हमने अभी अपने को शरीर समझा है--और शरीर की मृत्यु हो सकती है--और मृत्यु है तो डर है। अभी हमने अपने को मन समझा है। और मन का क्या भरोसा? अपने ही मन का भरोसा नहीं है। लाख कसम खाओ कि क्रोध न करूंगा, फिर क्रोध आ जाता है। लाख नियम लो ब्रह्मचर्य का, नियम टूट-टूट जाता है। लाख प्रयास के बाद भी मन फिर-फिर हावी हो जाता है। अभी न तो अपने मन पर कोई काबू है, न अभी अनुभव है अपने भीतर किसी अमृत तत्व का। तो भय तो होगा। मौत आ रही है! प्रतिपल आ रही है! कब आ जाए पता नहीं। और कितना ही उपाय करो, आएगी ही। कितने ही भागो, आएगी ही।
एक सूफी कहानी है प्यारी।

एक सम्राट का नौकर भागा हुआ आया। उसका बहुत प्यारा नौकर था। उसका बड़ा स्वामिभक्त नौकर था। अपनी जान भी दे दे मालिक के लिए। भागा हुआ आया; बाजार गया था, ऐसा घबड़ाया आया। जवान था, स्वस्थ था, सुंदर था। अभी बाजार गया था तो सब बात और थी। अभी लौटा तो यूं जैसे अचानक वसंत खो गया और पतझड़ आ गयी। उसके जीवन का पता एकदम पीला पड़ गया। चेहरा पीला, जैसे सारा रक्त निचुड़ गया हो। सम्राट ने पूछा, तुझे हुआ क्या? उसने कहा, देरी न करें मालिक! मैं गया था बाजार में, वहां एक काली छाया ने मेरे कंधे पर हाथ रखा। मैंने लौटकर देखा, मैंने पूछा, तू कौन है? उसने कहा, मैं तेरी मौत हूं। और आज शाम को तैयार मिलना। सूरज डूबने के वक्त, ठीक सूरज डूबने के वक्त तैयार मिलना, मैं आ रही हूं। तो मैं घबड़ा गया हूं। आज सांझ, आज ही सांझ मौत आ रही है। क्या करूं, क्या न करूं! एक ही बात सूझती है कि आपके पास तो एक से एक तेज चलने वाले घोड़े हैं, अपना सब से तेज घोड़ा मुझे दे दें, मालिक, मैं जितनी दूर निकल जाऊं इस नगर से उतना अच्छा।

बात मालिक को भी समझ में आयी। बात तर्कपूर्ण थी, अर्थपूर्ण थी। मौत यहीं आएगी। भाग जाने दो!, उसका प्यारा नौकर था। उसने अपना सबसे तेज घोड़ा दे दिया और कहा कि यह तुझे सैकड़ों मील दूर ले जाएगा सूरज डूबते-डूबते। उस दिन उस नौकर ने न तो भोजन लिया, न पानी पीया। रुका ही नहीं। भागता ही गया घोड़े पर, भागता ही गया घोड़े पर! और घोड़ा अदभुत था, वह सैकड़ों मील दूर लेकर पहुंच गया।

सांझ जब सूरज डूबता था, उसने दूर एक बगीचे में जाकर घोड़े को एक वृक्ष से बांधा, घोड़े की पीठ थपथपायी और कहा, प्यारे घोड़े, तू सच में ही अदभुत है! तू तीर की चाल से चला। तू मुझे इतने दूर ले आया। मैं तेरा धन्यवाद करता हूं

और तभी फिर वही काली मौत उसके कंधे पर हाथ रखी और उसने कहा, धन्यवाद मैं भी करती हूं तेरे घोड़े का, तू ही नहीं। क्योंकि मैं परेशान थी; क्योंकि तेरी मौत इस झाड़ के नीचे होनी थी और मैं चिंतित थी कि तू समय पर पहुंच पाएगा या नहीं। लेकिन तू आ गया। घोड़ा तेज है!

कहीं भागो कितना ही तेजी से भागो, बच न पाओगे। जब तक मौत है तब तक भय है। लेकिन जिसने ब्रह्म को जाना, उसने जाना अमृत को। अमृत को जानते ही भय विदा हो जाता है। क्योंकि उसे इस बात का पश्चात्ताप करने का मौका ही नहीं मिलता। इसलिए भी भय विदा हो जाता है। कि अब उसके जीवन में कोई पश्चात्ताप नहीं रह जाता।

तुम एक काम कर लेते हो, फिर पछताते हो। नहीं करते तो भी पछताते हो। तुम्हारी दुविधा बड़ी है। तुम्हारा द्वंद्व बड़ा मुश्किल भरा है। करो तो मुसीबत, न करो तो मुसीबत। अगर क्रोध नहीं करते हो तो पछताते हो, इसलिए पछताते हो कि लोग क्या सोचेंगे कि उसने मुझे गाली दी और मैं जवाब भी न दिया। लोग मुझे सोचेंगे कमजोर हूं, कायर हूं, नपुंसक हूं। अगर जवाब देते हो, क्रोध करते हो, तो फिर ग्लानि पकड़ती है कि यह मैंने क्या किया! यह कैसा मैंने पागलपन किया! यह कैसे मैं शूद्र व्यवहार किया! लोग क्या कहेंगे!

तुम जो भी करते हो, पश्चात्ताप आता है। लेकिन ब्रह्मज्ञानी को, जिसने धर्म को अनुभव किया है, उसे कोई पश्चात्ताप नहीं। कोई मौका ही नहीं पश्चात्ताप का। क्योंकि मैंने यह काम शुभ किया, यह भी उसे ख्याल नहीं, कि मैंने यह काम अशुभ किया, यह भी उसे खयाल नहीं। कि मुझसे यह पाप हो गया, यह भी चिंता नहीं, कि मुझसे यह पुण्य हो गया, यह भी अहंकार नहीं। असल में धर्म की उस परम ज्योति में व्यक्ति तो विलीन हो जाता है, तिरोहित हो जाता है, मैं भाव तो बचता नहीं, इसलिए भयभीत कौर हो? परमात्मा ही शेष रह जाता है। जब उसकी जो मर्जी, करे! शुभ करे, अशुभ करे, मुझे क्या लेना-देना है!

धर्म को जानने वाला व्यक्ति जो करता है, वही आनंद से करता है; क्योंकि वह स्वयं तो करने वाला होता ही नहीं, उसके भीतर परमात्मा ही करता है।

मोरारजी देसाई का यह कहना कि "भारतीय धर्म और संस्कृति को मेरा काम बदनाम करने वाला है' निहायत पागलपन की बात है। उन्हें पता ही नहीं कि धर्म और संस्कृति भारतीय नहीं होते। और जो भारतीय है, वह जितने जल्दी गिर जाए उतना अच्छा। क्योंकि मैं चाहता हूं एक ऐसी मनुष्यता--एक ऐसी पृथ्वी, जिस पर भारत न हो, पाकिस्तान न हो, चीन न हो, जर्मनी न हो, अमेरिका न हो। बहुत हो गया उपद्रव इन नामों पर। मैं चाहता हूं एक ऐसी मनुष्यता, जहां धार्मिकता तो हो और धर्म न हों। मैं चाहता हूं एक ऐसा आदमी, जो कुरान में भी रस ले सके और गीता में भी रस ले सके और गुरुग्रंथ में भी रस ले सके और समभाव से रस ले सके। और समभाव से समझ सके। जो उपनिषदों को भी आनंदमग्न होकर गुनगुनाए, जो लाओत्सु को भी समझे, जो जेन्द अवेस्ता को भी समझे। जिसके भीतर बुद्ध भी बोलें और महावीर भी बोले और कृष्ण भी बोले और जिसके भीतर कोई विरोध न रह जाए।

तो जो भारतीय है वह तो गिर ही जाना चाहिए। मैं कोई भारतीय का पक्षधर नहीं हूं। मैं किसी तरह के विभाजन का पक्षधर नहीं हूं। मैं अविभाज्य मनुष्यता के पक्ष में हूं। और मैं एक पृथ्वी चाहता हूं जो अखंड हो। जब तक पृथ्वी अखंड नहीं है तब तक आदमी परेशानी में रहेगा। आज यह युद्ध, कल वह युद्ध। आज यह जेहाद, कल वह जेहाद।

और कैसे-कैसे अदभुत लोग हैं। कच्छ के जैन मुनि कच्छ-केसरी अचल गच्छाधिपति, उन्होंने अपने वक्तव्य में जेहाद शब्द का प्रयोग किया है, कि मेरे खिलाफ जेहाद छेड़ना है। जैन मुनि जेहाद की बातें कर रहा है। हां, कोई मुसलमान मौलवी करता तो समझ में भी आ जाता। जेहाद! धर्मयुद्ध! आह्वान किया है कि युवकों, तैयार हो जाओ रक्त बहाने के लिए। और रक्त बहाने की बात तो तभी उठती है, जब रक्त बहाने की आकांक्षा हो, इच्छा हो। और ये जैन मुनि! "अहिंसा परमो धर्मः' की बात करते थकते नहीं! जिनका चौबीस घंटा "अहिंसा परमो धर्मः' में गुजर रहा है! रक्त बहाने को तैयार हो जाओ! मरने-मारने के लिए तैयारी करो! जेहाद छेड़ दो!

धर्म के नाम पर यही मूढता होती रही है। यह धार्मिकता नहीं है विक्षिप्तता है। और यह तब तक जारी रहेगी, जब तक आदमी को हम मंदिर और मस्जिद में बांटेंगे, गिरजे में और

गुरुद्वारे में बांटेंगे। गिरजा भी अपना, मंदिर भी अपना, मस्जिद भी अपनी गुरुद्वारा भी अपना। जहां शांत हुए, वहीं तीर्थ। जहां मौन होकर बैठे, वहीं मंदिर। और जहां तुम्हारे प्राणों में प्रार्थना जगी, वहीं मस्जिद। और जहां तुम मस्ती में डोलने लगे, वहीं गिरजा, वहीं गुरुद्वारा। व्यक्ति जहां चलता है वहां तीर्थ बन जाते हैं; जहां बैठता है वही भूमि पवित्र हो जाती है।

लेकिन हमें ये पुरानी धारणाएं छोड़नी होंगी।

इसलिए एक अर्थ में तो उनकी बात सच है कि मेरे आंदोलन खतरनाक है और घातक है। खतरनाक उनके लिए, जो पुरानी विक्षिप्तता को बचाना चाहते हैं; घातक उनके लिए, जिनके स्वार्थ पुराने से जुड़े हैं। लेकिन उनके लिए नहीं, जो मनुष्य के भविष्य को उज्जवल करना चाहते हैं; उनके लिए नहीं जो चाहते हैं कि सुबह होए नहीं, उनके लिए जरूर घातक है, जो रात को ही बनाए रखना चाहते हैं। उल्लुओं के लिए और उल्लू-पट्ठों के लिए घातक है, क्योंकि उनकी रात गयी और सूरज निकला कि उनके लिए अंधेरा हो जाएगा। बाकी सबके लिए दिन होगा, मगर कुछ उल्लू के पट्ठों को अंधेरा हो जाएगा। उनकी तो रात में ही जिंदगी थी। उनका तो मजा रात में था, अंधेरे में था। तो जो अंधेरे का शोषण कर रहे हैं, जो आदमी को अंधेरे में रखना चाहते हैं, उनके लिए जरूर खतरनाक है और घातक है। अन्यथा जिसको भी थोड़ा-सा जीवन का अनुभव होगा, वह मेरी बात सुनकर आह्लादित होगा, आनंदित होगा। क्योंकि मैं वहीं कह रहा हूं जो सदा जानने वालों ने कहा है। उसमें जरा भी भेद नहीं है।

"श्री देसाई ने गुजरात के मुख्य मंत्री श्री माधवसिंह सोलंकी के इस वक्तव्य के विरुद्ध अपनी तीखी प्रतिक्रिया की कि "किसी भी धार्मिक नेता को भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में कहीं भी आश्रम बनाने की स्वतंत्रता है' और उन्होंने कहा कि बुरे कामों को बढ़ावा देने के लिए इस स्वतंत्रता का उपयोग नहीं किया जा सकता।'

निर्णायक कौन होगा कि कौन-सा काम बुरा है और कौन-सा अच्छा? श्री मोरारजी देसाई निर्णायक हैं? तो तो स्वमूत्र पीना अच्छा काम हो जाएगा। यह देखते हो मोरारजी भैया को, कलियुगी कृष्ण कन्हैया को, स्वमूत्र-बिहारी, गोबर-गिरधारी! तब तो इनका जो करना है, इनका जो जीवन है, वह शुभ हो जाएगा? तब तो और सब अशुभ हो जाएगा। इनसे कोई निर्णय होगा?!

निर्णय कौन करेगा?

जैनों से पूछे तो रात्रि-भोजन पाप है, बुरा काम है। लेकिन सारी दुनिया, जैनों को छोड़कर, रात्रि-भोजन करती है। अगर जैनों को निर्णय करना हो तो भारत में उन लोगों के रहने का कोई हक नहीं है जो रात्रि-भोजन करते हैं। मतलब तीस-पैंतीस लाख जैनों को छोड़कर सत्तर करोड़ भारतवासियों को हिंद महासागर में फेंक देना चाहिए, क्योंकि ये रात्रि-भोजन करते हैं और यह महापाप है!

निर्णय कौन करेगा? जो भी निर्णय करेगा वह अपने को ठीक मान कर चलेगा और दूसरे को गलत। स्वतंत्रता का अर्थ ही क्या होता है फिर? स्वतंत्रता का अर्थ यह होता है: जिन संबंधों में कोई निर्णय नहीं हो सकते, उन संबंधों में प्रत्येक व्यक्ति को अपने ढंग से जीने की स्वतंत्रता है, जब तक वह दूसरे के ऊपर अपने को आरोपित नहीं करता।

मैं किसी के ऊपर अपने को आरोपित नहीं करता। मैं तो अपने आश्रम के द्वार के बाहर भी नहीं निकलता। हां, जिसको उत्सुकता हो वह मुझे सुनने आता है। मैं तो किसी को सुनाने भी नहीं जाता, आरोपण करने की तो बात दूर। मुझे तो जिसे सुनना है, उसको भी फीस चुका कर सुनना पड़ता है। मुझे सुनने के बाद प्रसाद भी नहीं बंटता। मुझे तो सुनने के लिए कुछ शर्तें पूरी करनी होती हैं तो तुम सुन सकोगे। मैं किसी पर अपने को आरोपित नहीं कर रहा हूं। जिसको सुनना हो, सुन ले, और जिसको जीना हो, जी ले!

स्वतंत्रता का अर्थ क्या है? अगर हम किसी के द्वारा निर्णय करवाएं, तो स्वतंत्रता उसके लिए बचेगी, बाकी सब के लिए तो परतंत्रता हो जाएगी। अगर हम मांसाहारियों से पूछे तो मांसाहार शुभ है; कुछ भी अशुभ नहीं। क्योंकि मांसाहारियों के हिसाब से परमात्मा ने पशु-पक्षियों को बनाया ही इसलिए कि आदमी उनको खाए। यह तो उनके धर्मशास्त्रों में लिखा हुआ है, कि मनुष्य के लिए ही परमात्मा ने सब कुछ बनाया। तो यह शुभ है, इसमें कुछ अशुभ नहीं है। तो अगर मांसाहारी सही हैं, तो फिर गैर-मांसाहारीयों को भारत में रहने का कोई अधिकार नहीं।

जीसस तो शराब पीते थे। इसलिए ईसाइयों में शराब पीना कोई पाप नहीं है। जब जीसस तक शराब पीते हैं शराब पीना तो पवित्र हो गया, पुण्य हो गया। तो अगर ईसाइयों को माना जाए तो मोरारजी देसाई को भारत में जीने का कोई हक नहीं है, क्योंकि ये शराबबंदी के पक्ष में हैं। तो भारत में जितने लोग शराब नहीं पीते, वे सब गलत काम कर रहे हैं।

निर्णय कौन करेगा? स्वतंत्रता का अर्थ ही क्या है? स्वतंत्रता का यही अर्थ है: जीवन में ऐसी बातें हैं, जिनका कोई निर्णय नहीं कर सकता, कोई निर्णायक नहीं हो सकता। और इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपनी दृष्टि और अपने प्रकाश के अनुसार जीने का हक है। हां, रुकावट तब डालनी चाहिए जब वह व्यक्ति अपने को दूसरे पर आरोपित करने लगे; जब वह दूसरे के साथ जबरदस्ती करने लगे।

और यह जबरदस्ती है। मोरारजी देसाई का यह कहना है कि मुझे कच्छ में आने की अनुमति नहीं दी जा सकती, यह जबरदस्ती है। यह मेरे साथ जबरदस्ती है और कच्छ के लोगों के साथ जबरदस्ती है। यह दोहरी जबरदस्ती है। क्योंकि अगर कच्छ के लोग मुझे चाहते हैं तो मोरारजी देसाई कौन हैं? और निश्चित ही कच्छ के लोग मुझे चाहते हैं। यह मोरारजी देसाई के वक्तव्य से ही साफ होता है। उन्होंने अपने वक्तव्य में कहा है--चोर की दाढ़ी में तिनका है न, ऐसे उनके वक्तव्य में तिनका है--उन्होंने कहा कि "आचार्य रजनीश कभी भी कच्छ में अपना आश्रम स्थापित नहीं कर पाएंगे, यदि कच्छ की जनता..."यदि' पर ध्यान देना...यदि कच्छ की जनता इकट्ठी होकर उनका विरोध करने का साहस करे।' कच्छ की जनता

इकट्ठी है और विरोध करने का साहस भी रखती है, मगर विरोध, मोरारजी देसाई, आपका करेगी। इसके स्पष्ट प्रमाण हैं जिसका नहीं। रोज कच्छ से लोग यहां आ रहे हैं और मुझसे प्रार्थना कर रहे हैं कि आप जल्दी करें, हम प्रतीक्षा कर रहे हैं।

गुजरात सरकार के पास पैंसठ संस्थाओं ने मेरा विरोध किया है और तीन सौ साठ संस्थाओं ने मेरा समर्थन किया है। तो निर्णायक कौर है फिर? और जिन लोगों ने मेरा विरोध किया है, उनमें संस्थाएं केवल बीस हैं। उन बीस में भी अठारह जैनियों की हैं। और बाकी जो पैंतालीस हैं, वे संस्थाएं नहीं हैं, व्यक्तियों के पत्र हैं। एक-एक व्यक्ति ने पत्र लिख दिया है। और मेरे मित्रों ने गुजरात में जाकर और कच्छ में जाकर उन मित्रों से पूछताछ की कि तुमने यह पत्र लिखा, तो उनमें से अनेकों ने कहा, हमें पता ही नहीं किसने हमारे नाम से पत्र लिख दिया। बंबई के पांच-सात राजनैतिक गुंडे इस सारे काम को कर रहे हैं। और ये पांच-सात आदमी जब मांडवी पहुंचे तो मांडवी के लोगों ने इनकी पिटाई की और इनको निकाल बाहर गांव के फेंक दिया।

कच्छ की जनता तो इकट्ठी है। मगर मोरारजी देसाई के पक्ष में इकट्ठी नहीं है। वक्तव्य साफ है। "यदि' बता रहा है कि मामला क्या है। "यदि कच्छ की जनता इकट्ठी होकर विरोध करने का साहस करे', . . . ! कच्छ की जनता क्यों विरोध करे? और जिन लोगों ने, जिन तीन सौ साठ संस्थाओं ने मेरे पक्ष में समर्थन किया है, उनमें ऐसे भी पत्र हैं, एक-एक पत्र में सोलह सौ लोगों के दस्तखत हैं। जिन्होंने विरोध किया, उनमें एक आदमी का दस्तखत है--वह भी संदिग्ध है कि उस आदमी ने किया है या नहीं!

जिस व्यक्ति ने सोलह सौ लोगों के दस्तखत करवा के भेजे हैं, उसकी भी गिनती एक संस्था की तरह हो रही है और जिसने एक पत्र लिखा है, एक आदमी ने, उसकी भी गिनती एक संस्था की तरह हो रही है।

कच्छ की जनता को अगर विरोध करना है, तो कच्छ की जनता करेगी, मोरारजी देसाई को क्या पड़ी है? मोरारजी देसाई क्यों कच्छ के आसपास चक्कर लगा रहे हैं इधर तीन महीने से? क्या उनको बेचैनी हो रही है?

लेकिन अनजाने भी सत्य निकल जाते हैं।

एक ईसाई पादरी--वर्षा नहीं हुई थी और गांव भर के किसानों ने उससे प्रार्थना की कि वर्षा के लिए अब कुछ करो, तो उसने एक रविवार को प्रार्थना का आयोजन किया। सारे गांव के लोग इकट्ठे हों और परमात्मा से प्रार्थना की जाए, जरूर वर्षा होगी। सारे गांव के लोग इकट्ठे हुए। सिर्फ एक छोटा-सा बच्चा छाता लिए हुए पहुंचा। जो मिला उसे रास्ते में, उसी ने कहा, अरे मूर्ख, छाता किसलिए ले जा रहा है? वर्षा तो हो नहीं रही, आकाश में बादलों का पता नहीं, और तू छाता लेकर निकला है! और छाता कहीं गंवा मत देना रास्ते में! उसके मां-बाप ने भी कहा कि छाता किसलिए ले जा रहा है? और जब पादरी रास्ते में मिला तो उसने भी कहा कि अरे, तू छाता किसलिए लाया? उस लड़के ने कहा, बड़ी मुश्किल! मैं तो सोचा जब प्रार्थना होगी तो वर्षा होगी! तो आप प्रार्थना करवाने जा रहे हैं और बाकी लोग

प्रार्थना करने जा रहे हैं, मगर किसी को विश्वास नहीं कि वर्षा होगी। तो भाड़ में जाए ऐसी प्रार्थना, मैं अपने घर चला! सार ही क्या, एक आदमी छाता नहीं लाया, पादरी खुद ही छाता नहीं लाया, पादरी ही पूछ रहा है इस लड़के से कि छोकरे, यह छाता किसलिए ले जा रहा है? किसी को भरोसा नहीं है वर्षा का! वह छाते की गैर-मौजूदगी बता रही है कि करने जा रहे हैं प्रार्थना, लेकिन सब जानते हैं कि कुछ होना है क्या!

अगर कच्छ की जनता को विरोध करना है तो कच्छ की जनता विरोध करेगी--मोरारजी देसाई कोई कच्छी नहीं हैं। इनको क्या पड़ी है? इनको क्या परेशानी हो रही है? इनके क्यों प्राण निकले जा रहे हैं?

और कच्छ की जनता को क्या कायर समझते हो? क्योंकि जो उन्होंने गुजराती में शब्द उपयोग किया है, वह यह है कि अगर कच्छ की जनता में "दम' हो, . . .मतलब भड़काने की कोशिश है। दम मारो दम!...कच्छ की जनता में अगर दम हो तो विरोध करे। कोई विरोध कर नहीं रहा है, तो अब जबरदस्ती विरोध को खड़ा करने की कोशिश की जा रही है।

क्यों कच्छ की जनता के पीछे पड़े हो? तुम्हीं विरोध करो न! तुम तो अनशन करने में कुशल हो। मेरे खिलाफ अनशन करो तो तुमको पता चलेगा! मैं कोई गांधीवादी नहीं हूं कि तुम्हारे अनशन से कुछ परेशान हो जाऊंगा। मेरे खिलाफ आमरण अनशन करो! और मर जाओगे तो हम उत्सव मनाएंगे। कोई मेरी तरफ से नहीं कहने आएगा कि अनशन तोड़ो। कोई संतरे का जूस लेकर तुम्हारे पास हाजिर नहीं होगा। ठीक है, जिसको मरना है उसको मरने की स्वतंत्रता है। जिसको उपवास करके मरना है वह उपवास करके मरे।

यह गांधीवादियों ने खूब इस देश में उपद्रव कर रखा है! एक गांधीवादी आमरण अनशन कर देता है, दूसरा गांधीवादी संतरे का रस ले कर पहुंच जाता है। यह षडयंत्र चलता रहा है। दोतीन दिन उपवास हो गया, अखबारों में चर्चा हो गयी, अखबारों में फोटो छप गये, फिर संतरे का रस तो तैयार ही है! कोई मरता ही नहीं आमरण अनशन कितने होते हैं, कोई मरता ही नहीं।

मेरे खिलाफ आमरण अनशन करो तो तुमको पता चलेगा, कि मैं आशीर्वाद दूंगा कि तुम्हारा अनशन जरूर पूरा हो! अरे, सभी का काम पूरा होना चाहिए! तथास्तु! और मैं देखूंगा कौन तुम्हें रस पिलाता है? क्योंकि में रस पिलाने वालों का विरोध करूंगा। क्योंकि रस पिलाने वाले बेईमान हैं। वे तुम्हारे ही चट्टे-बट्टे हैं, जो पहले ही से रस निकाल कर तैयार रखते हैं। अनशन शुरू होता है, उसके पहले ही रस तैयार हो जाता है। मैं रस भी नहीं पीने दूंगा। मेरे संन्यासियों का जत्था भी तुम्हारे चारों तरफ भजन-कीर्तन करेगा कि कोई रस रात को अंधेरे में एकांत में पिला न जाए। और ग्लूकोज भी पानी में पिला कर पीने नहीं दूंगा। महात्मा गांधी भी ग्लूकोज पीते रहे पानी में मिला कर। वह कोई उपवास है! किसको धोखा दे रहे हो?

कच्छ की जनता की दम फिक्र छोड़ो, मोरारजी देसाई, तुम में कुछ दम हो तो आमरण अनशन कर लो! यूं भी अब मरने के करीब हो, नाम रह जाएगा कि आमरण अनशन में मर गये!

और उन्होंने कहा कि मैंने तो अपने शासन-काल में आचार्य रजनीश की गति विधियों की जांच का आदेश दिया था। वह ।तो तुमने दिया था और मुझे पर बहुत मुकदमे भी तुमने चला रखे थे, परिणाम क्या हुआ, यह सवाल है! तुम्हारी जांच-पड़ताल से मिला क्या? तुम्हें हाथ क्या लगा? तीन साल तुम सत्ता में थे, देश के प्रधान मंत्री थे और तीन साल तुमने जी-जान तोड़ कोशिश की कि तुम्हें कुछ मिल जाए, तुम्हें कुछ भी तो हाथ नहीं लगा। जांच-पड़ताल का आदेश देने से क्या होता है? यह तो किसी के भी खिलाफ दे सकते हो। जिसके हाथ में सत्ता हो, वह किसी के भी खिलाफ जांच-पड़ताल का आदेश दे सकता है। तुम्हें मिला क्या जांच-पड़ताल से?

और मैं तो सत्ता में नहीं हूं। लेकिन मैं तुमसे कहता हूं कि मैंने बिना जांच-पड़ताल के तुम्हारे बाबत बहुत-सी बातें पता लगा रखी हैं। कि तुम्हारा एक मुसलमान औरत से नाजायज संबंध रहा है। सिद्ध करो कि नहीं रहा। हालांकि मैं इसको कुछ बुरी बात नहीं मानता। यह तो हिंदू-मुसलिम एकता! अल्लाह-ईश्वर तेरे नाम! यही तो गांधी जी का संदेश है! और उसने नाजायज बच्चा भी पैदा हुआ, उससे लड़का भी पैदा हुआ। और उसको पाकिस्तान भगाया। और जब मोरारजी देसाई सत्ता में थे, तो बेगम आयी भी थी घूमने भारत। उसको भारत के सब सर्किट हाउसों में ठहराने की व्यवस्था की गयी थी। दिल्ली में भी विशेष जहां सरकारी मेहमान ठहरते हैं वहां ठहराया गया था। किसी पाकिस्तानी को सभी जगह जाने की आज्ञा नहीं होती। उसको सीमा होती है कि वह एक जगह जाए या तो दो जगह जाए, उससे ज्यादा कहीं जा नहीं सकता। लेकिन इस बेगम को खुला पासपोर्ट दिया गया था।

उस नाजायज बच्चे को स्वीकार करो! और अच्छा लक्षण है! हिंदू-मुसलमान के मेल से जो पैदा हो..."सन्मति मोरारजी देसाई!' "सबको सन्मति दे भगवान!'...। ऐसा उसका कुछ नाम रखो! या "अल्लाह-ईश्वर', दोनों मिला कर नाम रख लो।

तुम्हें मिला क्या मेरे खिलाफ जांच-पड़ताल करवाने से? तीन साल मैं प्रधान मंत्री रहूं तो तुम्हारी बखिया उधेड़ दूं! तुम्हारी खटिया खड़ी कर दूं! तुमने कर क्या लिया? तीन साल कोशिश करते रहे कि किसी तरह मुझे अदालत में खींच कर खड़ा कर दो, वह भी तुम न कर पाए!

और अंत में श्री देसाई ने कहा कि आचार्य रजनीश मुझे काम-दमित मानते हैं और मेरी आलोचना लगातार करते रहे हैं, परंतु मैं उनकी यह आलोचना आशीर्वाद की तरह लेता हूं। झूठ बोलने में भी थोड़ा संकोच तो होना चाहिए। इतने सस्ते में संत न हो जाओगे। न महात्मा हो जाओगे। अगर सच में इसमें ईमानदारी है कि तुम मेरी आलोचना में आशीर्वाद लेते हो, तो फिर मेरा विरोध क्यों कर रहे हो कच्छ आने का? अरे, आशीर्वाद देने वाले व्यक्ति का तो स्वागत करना चाहिए! पलक-पांवड़े बिछा कर स्वागत करना चाहिए! अरे, फूल

नहीं तो फूल की पांखुरी--जैसे गुजराती कहते हैं। तुम्हें स्वागत के लिए झंडा ले कर खड़ा होना चाहिए--अगर मैं आशीर्वाद दे रहा हूं और तुम्हें आशीर्वाद मिल रहे हैं।

मगर यहां सस्ते में संत हो जाने की चेष्टा चलती है। यह वे अपनी बहादुरी दिखला रहे हैं, संतत्व दिखला रहे हैं। मुझको तुम धोखा न दे सकोगे! अगर मेरी बातों में आशीर्वाद लगता है, तब तो फिर मुझे गुजरात ही बुला लेना चाहिए। मेरे लिए फिक्र करो कि मैं जल्दी से जल्दी वहां आ जाऊं; जितने पास रहूंगा उतने ज्यादा आशीर्वाद दूंगा। और यहां आ कर बैठो तो रोज आशीर्वाद दूं।

लेकिन थोथी बातें! अच्छी बातों के नाम पर थोथी बातें चलती हैं।

और काम-दमित तो आप हो ही; इसमें आलोचना कुछ भी नहीं है। मैं तो सिर्फ तथ्य की बात करता हूं, आलोचना में मुझे क्या रस? और मोरारजी देसाई की आलोचना करके मुझे क्या लेना! मैं तो दो कौड़ी भी मूल्य नहीं मानता इस तरह के लोगों का। लेकिन तथ्य को मैं तथ्य की तरह कह देना चाहता हूं।

एक राजनेता ने कुम्हार को डांटा। क्योंकि कुम्हार अपने गधे को इस तरह कसकर पकड़े हुए खड़ा था रास्ते पर कि गधा तड़फ रहा था। कुम्हार भी पसीने-पसीने हो रहा था। राजनेता ने कहा, गधे को तुमने इस तरह कसकर पकड़ रखा है, अरे नालायक, उसे छोड़ता क्यों नहीं? इस तरह तो वह रास्ता भी पार नहीं कर सकता है। तू बिलकुल गधा मालूम होता है--कुम्हार से कहा राजनेता ने--अरे, अपने भाई का कुछ तो ख्याल रख! कुम्हार बोला, हुजूर, मैंने इसको इसलिए कसकर पकड़ रखा है कि कहीं राजनीति में भरती न हो जाए। आप जो निकल रहे हैं! आपके डर से इसको कसकर पकड? रखा है। क्योंकि सत्संग का असर तो होता ही है। और गधा गधा ही है! बुद्धि कहां है उसमें! हो जाए राजनीति में भरती! बाकी सब गधे हो ही गये हैं। गधों की कमी पड़ रही है, क्योंकि सब गधे दिल्ली चले गये हैं। और मेरा कुम्हार का धंधा मिट जा रहा है।

इन गधों की आलोचना करके मुझे करना क्या है?

आलोचना नहीं, मैं जो सत्य है उसे वैसा ही कह देता हूं।

एक राजनेता नदी में डूब रहा था। मुल्ला नसरुद्दीन ने उसे बड़ी मुश्किल से बचाया। बड़ी अपनी जान भी जोखम में डाली। बाहर आकर राजनेता ने बड़ी हिम्मत करके दो रुपये का नोट निकालकर दिया और कहा कि भइया, एक रुपया तू रख ले मुझे बचाने का और एक रुपया मुझे वापिस लौटा दे। मुल्ला नसरुद्दीन ने कहा, नेताजी, यहां तो कोई दूकान भी नहीं कि नोट कहीं भुनाया जाए, आप इसे अपने पास ही रख लीजिए, जब आप दुबारा डूबें तो मुझे दो का नोट दे दीजिए। वैसे अगर मुझसे पूछें तो आपकी कीमत आठ आने से ज्यादा नहीं। इसलिए मैं तो आपको दो रुपये में चार बार भी बचा सकता हूं?

इनकी कीमत क्या है? इनकी आलोचना करने से मुझे प्रयोजन क्या है? लेकिन मैं तथ्य जरूर देश के सामने रख देना चाहता हूं। क्योंकि दो कौड़ी के राजनीतिज्ञ देश की छाती पर सवार हो गये हैं, मूंग दल रहे हैं, देश को बरबाद कर रहे हैं! इनकी मूढ़ताओं के कारण इस

देश के जीवन में कोई क्रांति नहीं हो पा रही है। क्योंकि ये देश की पूरी की पूरी चित्तदशा को व्यर्थ की बातों में उलझाए रखते हैं। जीवन की कोई समस्या सुलझने नहीं देते। सुलझे कैसे?, ऐसी समस्याएं खड़ी कर देते हैं जो समस्याएं ही नहीं हैं। और उन पर लोगों का ध्यान बंटाते हैं। व्यर्थ की बातें खड़ी कर देते हैं। शराबबंदी होनी चाहिए। जैसे शराबबंदी होने से देश की गरीबी मिट जाएगी। जैसे शराबबंदी होने से देश में धन बरस जाएगा। जैसे शराबबंदी हो जाने से देश में एकदम सोने की खदानें खुल जाएंगी। मगर लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए व्यर्थ की कोई भी बकवास! कि शराबबंदी हो जाए। कि लोगों को चरखा चलाना चाहिए। कि लोगों को खादी पहनना चाहिए।

जीवन की असली समस्याओं से बचने के लिए क्या-क्या तरकीबें निकालते हैं! जिनसे कुछ भी हल होने वाला नहीं है।

जीवन को विज्ञान दो!--अगर बाहर की समृद्धि लानी है तो। और धर्म दो अगर भीतर की समृद्धि लानी है तो। मैं दोनों का पक्षपाती हूं। बाहर के जीवन के लिए विज्ञान चाहिए, भीतर के जीवन के लिए धर्म चाहिए। तुम विज्ञान से भी वंचित कर रहे हो देश को--अवैज्ञानिक और व्यर्थ की बातें सिखाकर, . . .

अभी कुछ दिन पहले मोरारजी देसाई ने कहा, चिकित्सकों की एक कांफ्रेंस में, कि कैंसर का इलाज छः सप्ताह के भीतर सिर्फ अंगूर का रस लेने से हो सकता है। चिकित्सक भी थोड़े चौके! उन्होंने कहा कि जरा विस्तार से समझाए। अगर आप कैंसर का मामला हल कर दें, जब तो गजब हो जाए। और छः ही सप्ताह का मामला है। और अभी तक हम तो कोई खोज नहीं पाए कि कैंसर का कैसे इलाज हो।

तो मोरारजी देसाई ने कहा कि छः सप्ताह--पानी भी नहीं पीना है, सिर्फ अंगूर का रस। तो उन्होंने कहा कि ठीक है, यह कोई बहुत बड़ी बात नहीं है। छः सप्ताह अंगूर के रस पर रखा जा सकता है; फिर मरीज बचेगा? तो उन्होंने कहा, नहीं, बचेगा तो नहीं, मगर बड़ी शांति से मरेगा।

वह मरेगा ही शांति से! छः सप्ताह में ऐसे ही मर जाएगा। क्या गजब के लोग हैं! क्या-क्या समाधान बता रहे हैं! शांति से मरेगा! अरे, शांति के लायक शक्ति भी बचेगी छः सप्ताह में? एक तो कैंसर मार रहा है और तुम पानी न पीने दोगे, भोजन न करने दोगे, दवा न लेने दोगे; अंगूर का रस पीला-पीला कर कुछ बचा-खुचा होगा तो वह भी मार डालोगे। छः सप्ताह में अपने-आप शांत हो जाएगा--ठंडा हो ही जाएगा। क्या गजब का इलाज बताया।

चिकित्सक तो पहले सोचे थे कि इलाज मिल गया। तब अपना सिर ठोंक लिया होगा! कि मरेगा तो निश्चित ही, बचाया तो जा नहीं सकता, तो फिर इलाज कैसा है यह? बात ऐसी की थी जैसे इलाज खोज लिया। और परिणाम क्या निकला?

इस देश के नेताओं की अगर बातें तुम सुनो, तो पहाड़ खोदो और चूहा भी नहीं निकलता। पहाड़ खोद कर तुम्हें खतम हो जाओगे, चूहा वगैरह कुछ नहीं निकलेगा। यह देखा--छः सप्ताह अंगूर का रस! कैंसर का इलाज खोज लिया इन्होंने! फिर होश आया होगा कि इसमें

तो फंसेंगे कि छः सप्ताह में, कोई बड़ी बात तो है नहीं, छः सप्ताह अंगूर के रस पर आदमी को रखा जा सकता है--और कैंसर ठीक न हुआ तो फिर क्या होगा! तब तत्क्षण उन्होंने बदल दिया। दांव बदल दिया। अरे, राजनेता को बदलने में क्या देर लगती है! वह तो मौसम की तरह बदलता है--गिरगिट की तरह बदलता है। "मरेगा तो मरीज जरूर, लेकिन शांतिपूर्वक मरेगा। उसकी मौत बड़ी शांत होगी।'

क्या-क्या दलीलें लोग खोज लेते हैं!

सर्कस के एक मैनेजर से एक दर्शक ने पूछा, "आप कैसे कह सकते हैं कि आपके सर्कस का बौना संसार का सबसे छोटा बौना है?'

"वह तो है'--मैनेजर बोला--"जब उसके पांव में दर्द होता है तो वह समझता है कि सिर में दर्द हो रहा है।'

देखते हैं, क्या गजब के लोग! अरे, कितना ही बौना हो, बिलकुल चींटी भी हो, तो भी पैर में दर्द होगा तो सिर में दर्द थोड़े ही समझ लेगा!

एक लड़का झूठ बोल रहा था। उसके राजनेता पिता ने कहा, "देख बेटा, झूठ मत बोल। बंद कर झूठ बोलना, नहीं तो तेरे सिर पर सींग निकल आएंगे।'

लड़का बोला, "ओह बापू, मुझे झूठ से डराने के लिए आपको कितना बड़ा झूठ बोलना पड़ रहा है! और आपके अभी तक सींग नहीं निकले! राजनीति में रह कर और सींग नहीं निकले! अरे, मैं जरा-सा झूठ बोलूंगा और सींग निकल आएंगे!'

एक बेटा लौटा स्कूल से। एकदम भागा आया, हड़बड़ाया। अपने राजनेता पिता से उसने कहा, "बापू, रास्ते में एक शेर मिल गया। अरे, शेर बबर! बड़ा भयानक शेर! और मेरे पीछे पड़ गया।'

बाप ने कहा कि देख तुझसे मैं अरबों-खरबों बार कह चुका हूं कि झूठ मत बोल।...अरबों-खरबों बार!...कि झूठ मत बोल, अतिशयोक्ति मत कर! सड़क पर कहां का शेर बबर मिल जाएगा! कहां है वह शेर बबर?

उस लड़के ने कहा, है, वह बाहर खड़ा है। खिड़की में से आप खुद ही देख लो।'

देखा, एक मरियल कुत्ता कि अब मरा तब मरा, वह खड़ा था। बाप ने कहा, "मुझे पता ही था। तू जा ऊपर और भगवान से प्रार्थना कर, क्षमा मांग, कि अब अतिशयोक्ति कभी नहीं करूंगा; झूठ नहीं बोलूंगा।'

लड़का ऊपर गया। मगर राजनीतिज्ञ का बेटा, पहले ही से गणित सीखना शुरू कर देता है। अब जब यह बाप ही खुद कह रहा है कि अरबों-खरबों बार तुझसे कह चुका! अरबों-खरबों बार कहने का मतलब कम से कम लाख बार रोज कहो, तब कभी अरबों-खरबों बार हो सके। अभी बेटे की उम्र ही कितनी है! खुद ही अतिशयोक्ति कर रहा है। खुद ही झूठ बोल रहा है।

बेटा थोड़ी देर में वापिस आया। बाप ने कहा, "तूने प्रार्थना की परमात्मा से?

क्षमा मांगी?'

उसने कहा, "मैंने मांगी, मगर परमात्मा क्या बोला, आपको मालूम? "बाप और चौंका, बोला कि अब परमात्मा भी बोला! "क्या बोला?' "परमात्मा ने कहा,--बेटा कहने लगा--'कि तू चिंता मत कर। तेरी कोई भूल नहीं। अरे, पहले जब मैंने कुत्ते को देखा था तो मैं भी यही समझा था कि शेर बबर है। वह तो जब मेरे बाप ने मुझे डांटा, तब मैं समझा कि कुत्ता है। तेरी कोई गलती नहीं। मुझे भी धोखा हो गया था।'

झूठ में तो फिर पंख लगते जाते हैं। एक झूठ से दूसरा झूठ निकलता आता है।

अब मोरारजी देसाई सत्य बात को छुपाने के लिए झूठ पर झूठ बोल जाते हैं। सत्य बात कुल इतनी है कि मेरा गुजरात आना, गुजरात में जो किसी तरह की ठेकेदारी लिए बैठे हैं--चाहे धर्म की ठेकेदारी हो, चाहे राजनीति की--उनके प्राण खलबली में पड़ गये हैं। क्योंकि मैं वहां आऊं तो उन्हें पक्का पता है कि उनकी पुरानी ठेकेदारी उखड़ जाएगी। वह बात तो कहेंगे नहीं। संस्कृति और धर्म को खतरा है! और जनता को उकसाने की कोशिश, भड़काने की कोशिश! यह गुंडागर्दी है सीधी और कुछ भी नहीं। चाहे इसको गांधीवादी गुंडागर्दी कहो--कुछ फर्क नहीं पड़ता--मगर सब गुंडागर्दी है। अगर तुम सत्य हो तो इतना क्या डर है तुम्हें? मैं आऊंगा, आमना-सामना हो लेगा। तुम अपना सत्य लोगों को कह देना, मैं अपना सत्य लोगों को कहूंगा। और मैं तो कहीं घूम कर कहूंगा भी नहीं। मैं तो अपनी जगह बैठ कर कहूंगा, जिसको सुनना होगा, आएगा। तुम घूम-घूम कर लोगों को समझाना। अगर तुम्हारी बात में कुछ बल होगा तो लोग जरूर मान लेंगे। क्या इतने घबड़ाते हो? मैं तो तुमसे नहीं घबड़ाया। मैं तो तुमसे नहीं डरा हुआ हूं। मुझे तो किसी का कोई भय नहीं है। मुझे जो कहना है, वही कह रहा हूं। और वही कहता रहूंगा।

और क्या तुम सोचते हो, पूना भारत के बाहर है, कच्छ भारत के भीतर है? पूना ही से बरबाद कर दूंगा तुम्हारी संस्कृति को। अरे, बरबाद ही करना है तो कहीं से भी कर दूंगा। और तुम्हारे धर्म को उखाड़ ही फेंकना है तो यहीं से उखाड़ फेंकूंगा। उसके लिए कच्छ आने की खास क्या जरूरत है! लेकिन सब ठेकेदार अपने-अपने अड्डे बांधे हुए हैं। उनकी सीमा के भीतर उनको डर लगता है। बाहर उन्हें क्या प्रयोजन है? गुजरात मैं न आ जाऊं, वह भय है!

और उनको इस बात का भी भय है कि गुजरात के पास इस देश की प्रबुद्धतम जनता है।...मैं सारे देश में घूमा हूं। मुझे गुजरात से निश्चित रूप से प्रेम है। और मेरे प्रेम का कारण है, कि गुजरात में मैंने सबसे ज्यादा विचारशील वर्ग देखा। और इसलिए मैं जानता हूं कि मेरा वहां पहुंचना गुजरात में एक हवा पैदा करेगा, एक क्रांति ले आने वाला है। और ये सब झूठे सिक्के एकदम चलने के बाहर हो जाएंगे। उस बात को छिपाने के लिए क्या-क्या ऊंची बातें हो रही हैं। सीधी बात कहो न कि तुम्हारे झूठे सिक्कों को घबड़ाहट हो रही है कि कहीं चलन के बाहर न हो जाएं! और एकाध को ही नहीं हो रही, इस तरह के लोग भी हैं। एक तरफ राजनेता हैं, दूसरी तरफ धर्मगुरु हैं। यह दूसरा प्रश्न इस बात को स्पष्ट करेगा--

भगवान, एक समाचार में श्री शंभु महाराज ने आप को चुनौती दी है कि आप गुजरात आ कर मेरे साथ खुला विवाद करें। आप जनता के सामने बाहर क्यों नहीं आते? उन्होंने कहा कि जैसी हालत दुखी और भूखी गायों की है, वैसी ही भारत की साठ प्रतिशत जनता की है। तो क्या रजनीश जी के सिद्धांत के अनुसार गायों की तरह जनता की भी हत्या कर देनी चाहिए?

श्री शंभु महाराज ने यह भी कहा कि गीता भारती आश्रम में उनका सात दिन तक प्रवचन हो रहा था तो आप अहमदाबाद आए थे और स्वामी अतुलानंद की अगवानी में अहमदाबाद में साधु-संत इकट्ठे हुए थे और उन्होंने आपको चर्चा करने के लिए आमंत्रण दिया था, तब आप चर्चा करने के लिए नहीं आए। इसलिए शंभु महाराज का कहना है कि रजनीश जी में ज्ञान का घमंड होने के कारण पागलपन दिखायी देता है। राजा रावण का भी ज्ञान घमंड के कारण सर्वनाश हुआ था। जिसका पतन होने वाला होता है उसे ऐसी ही दुर्बुद्धि घेर लेती है।

उन्होंने यह भी कहा कि संत विनोबा भावे ने गोवध बंद करने के लिए अनशन किया था तो क्या वे मूढ़ हैं?

भगवान, निवेदन है कि श्री शंभु महाराज के इस वक्तव्य पर कुछ कहें।

चैतन्य सागर!

पहली तो बात, जो चुनौती दे, उसे आना चाहिए। अगर शंभु महाराज मुझे चुनौती देते हैं तो उन्हें आना चाहिए। यह तो सीधा चुनौती का नियम है। मैं क्यों आऊं? चुनौती वे दें और जाने का कष्ट मैं लूं! चुनौती दी है तो आने की हिम्मत करो! यह तो चुनौती की सामान्य प्रक्रिया है। शंकराचार्य ने चुनौती दी थी तो सारे देश में घूमकर उनको जिन-जिन को चुनौती दी थी, उनसे विवाद करने जाना पड़ा था। अगर मुझे चुनौती देते हैं तो मैं तैयार हूं! जरूर आ जाएं, स्वागत है! मजा आ जाएगा!

और वे कहते हैं, "आप जनता के सामने बाहर क्यों नहीं आते?" मैं कोई राजनेता नहीं हूं। जनता से मुझे क्या लेना-देना है? जिसको मुझसे कुछ लेना-देना हो, वह मेरे पास आए। मैं क्यों किसी के पास जाऊं? कुआं प्यासे के पास नहीं जाता, जिसको प्यास लगी हो वह कुएं के पास आता है। जिसको प्यास लगी हो, वह मेरे पास आए। मेरे जाने का कोई सवाल नहीं उठता। और जनता को कोई मैं मूल्य नहीं देता हूं। जनता का अर्थ होता है: भेड़ों की भीड़।

मेरे लिए मूल्य है व्यक्ति का, जनता का नहीं। मेरे लिए मूल्य है आत्मा का, भीड़ का नहीं। एक-एक व्यक्ति का मेरे मन में सम्मान है, लेकिन भीड़ का मेरे मन में कोई सम्मान नहीं है। भीड़ इकट्ठी ही होती है उनकी जिनके पास व्यक्तित्व नहीं होता। जिनके पास अपनी निजता नहीं होती, वही भीड़ में खड़े होते हैं। सिंहों के नहीं लेहड़े। पुरानी कहावत है कि सिंह कोई भीड़-भाड़ में नहीं चलते; भेड़ें चलती हैं। और भेड़ें क्यों चलती हैं, भीड़-भाड़ में? क्योंकि अकेले में उनको डर लगता है, भय लगता है।

एक स्कूल में एक शिक्षक ने अपने एक विद्यार्थी से पूछा कि तेरे घर में तो भेड़ें हैं, एक सवाल का जवाब दे। अगर बाड़े में दस भेड़ें बंद हो और एक भेड़ बाड़े के बाहर निकल जाए, तो कितनी पीछे बचेगी? उस लड़के ने कहा, एक भी नहीं बचेगी। उसने कहा, तू कुछ होश की बातें कर! मैं कह रहा हूं एक भेड़ बाहर निकले और दस भेड़ें बंद हैं! तूने प्रश्न सुना कि नहीं.उसने कहा, मैंने प्रश्न सुना। तो उसके शिक्षक ने कहा, तुझे गणित आता है कि नहीं फिर? इतना भी गणित नहीं आता सीधा-सा कि जब एक भेड़ बाहर निकलेगी तो कितनी पीछे बचेंगी? उसने कहा, गणित की फिक्र करूं कि भेड़ों की फिक्र करूं! मेरे घर में भेड़ें हैं। यह प्रश्न आप किसी से पूछना जिसके घर में भेड़ें न हों; तो वह कहेगा, नौ बचेंगी; क्योंकि वह सिर्फ गणित को समझ कर चलेगा। मेरी मजबूरी यह है कि मैं भेड़ों को जानता हूं। अगर एक बाहर कूद गयी, तो बाकी नौ भी कूद जाएंगी। भेड़े तो अंधी होती हैं, भीड़ में चलती हैं। एक भेड़ चल गयी कि बाकी भेड़ें चल पड़ीं।

जनता भेड़ों से भरी हुई है। जनता से मुझे क्या लेना-देना है! मुझे व्यक्तियों से संबंध है। भेड़ क्या समझेगी? भीड़ क्या समझेगी? वह भीड़ तो दकियानूसी है, वह तो पुरातनपंथी है। उसे तो बंधी-बंधायी बातें ही समझ में आने वाली हैं।

एक दूसरे वक्तव्य में उन्होंने कहा है कि मैं आचार्य रजनीश को अपना गुरु स्वीकार कर सकता हूं, अगर वे स्वयं को गोपाल सिद्ध करें, कृष्ण सिद्ध करें। उनको शायद पता नहीं है कि वे क्या कह रहे हैं। हां, जनता भी प्रसन्न होगी, क्योंकि भेड़ें हैं, उनको कुछ समझ में नहीं...इनको भी कुछ समझ नहीं कि क्या कह रहे हैं! कृष्ण की सोलह हजार पत्नियां थीं और दूसरों की विवाहित स्त्रियों को भगा लाए थे। क्या शंभु महाराज तब मुझे अपना गुरु स्वीकार करेंगे जब मैं दूसरों की स्त्रियां भगा कर सोलह हजार स्त्रियां इकट्ठी खड़ी कर दूं? सिर्फ शंभु महाराज को शिष्य बनाने के लिए इतना उपद्रव करूं! अरे, एक ही स्त्री तो नर्क ले जाने के लिए काफी है, सोलह हजार! और वे भी दूसरों की भगायी गयी स्त्रियां; जिनसे उनका विवाह भी नहीं हुआ था!

और इस दुराचरण को जनता तो माने चली जाती है। इसको कहती है, यह भगवान की लीला! और अभी कोई यह लीला करे, तो फौरन उसको कारागृह में डालो। क्या तुम चाहते हो शंभु महाराज कि मैं झाड़ों पर बैठ कर स्त्रियों के कपड़े चुराकर और लीला करूं! तब तुम मेरे शिष्य बनोगे? एक शिष्य बनाने के लिए क्या-क्या उपद्रव मुझे करने पड़ेंगे! और तुम्हें शिष्य बना कर क्या करूंगा? फिर तुमसे भी मुझे यह काम लेना पड़ेगा--अरे, जो गुरु करेगा, वही शिष्य से करवाएगा--कि भइया जाओ, स्त्रियों के कपड़े चुराओ! अगर गुरु ने सोलह हजार भगायी, तो तुम कम से कम थोड़ी तो भगाओ, सोलह सौ सही! करोगे क्या? तुम्हें रख कर क्या करूंगा और?

कृष्ण ने इस देश में महाभारत का युद्ध करवाया। जो लोग शास्त्रों का हिसाब-किताब लगाते हैं, वे कहते हैं कोई एक अरब से ले कर सवा अरब लोगों की हत्या हुई। और ये शंभु महाराज, गो-हत्या बंद होनी चाहिए, इसका आंदोलन चलाते हैं। मेरे खिलाफ हैं वे इसीलिए

की उन्होंने मुझसे कहा था कि मैं आपका शिष्य हो सकता हूं अगर आप भी गो-हत्या बंद हो, इसका आंदोलन चलाएं। मैं भी इनकी मूढ़ताओं में सम्मिलित होऊं तो मैं इनका गुरु होऊं!

मेरे सामने बड़े सवाल हैं। गो-हत्या हो या न हो, यह कोई सवाल नहीं है।

और तुम कौन हो? तुम लोगों को समझाओ कि मत खाओ गो-मांस, यह बात समझ में आती है। लेकिन सरकार जबरदस्ती करे लोगों के साथ कि गो-मांस मत खाओ, यह बात समझ में नहीं आती। अगर तुम्हारी बात सच है तो फैलाओ, समझाओ; लोगों के मन को बदलो। लेकिन वह तो बनता नहीं! क्योंकि कौन मुसलमान तुमसे राजी होगा?

और भारत में तुम क्या सोचते हो सब शाकाहारी हैं? यह भ्रांति छोड़ दे! यह मुश्किल से दोतीन प्रतिशत लोग शाकाहारी हैं। अधिकतर लोग मांसाहारी हैं। सारी दुनिया मांसाहार पर जी रही है। अगर मांसाहारी सारी दुनिया में बंद हो जाए तो आदमी की मौत हो जाए।

कृष्ण ने एक अरब से ले कर सवा अरब लोगों की हत्या करवा दी--और अर्जुन को दलील क्या दी थी? और ये मुझसे कहते हैं, अगर मैं गोपाल हो जाऊं तो ये मेरे शिष्य हो जाएंगे। एक अरब, सवा अरब लोगों की हत्या करवाऊं, तब ये मेरे शिष्य होंगे! और दलील क्या थी उनकी, उस दलील को तो सोचो! दलील यह थी कि गौ के शरीर के मरने से गौ की आत्मा नहीं मरती, बात खत्म हो गयी, गीता तुम्हें समझ में आ गयी। जब आदमी के शरीर के मरने से आत्मा नहीं मरती, तो गो-वध कैसा?

फिर किसको बचाने में लगे हो?

और कृष्ण ने गीता में यह भी कहा--जिसके ये भक्त हैं; और ये जगह-जगह श्रीमदभगवत सप्ताह करवाते फिरते हैं--कृष्ण ने यह भी कहा कि परमात्मा जिसको मारना चाहता है, उसको मार ही चुका है, अर्जुन, तू तो निमित्त मात्र है। तो बेचारे ये कसाई, जो जगह-जगह गो-हत्या कर रहे हैं, ये भी निमित्त मात्र हैं। जब परमात्मा नहीं मारना चाहेगा, तो ये मार सकेंगे? ये ही तो शंभु महाराज जैसे लोग कहते हैं कि परमात्मा की बिना मर्जी के पत्ता नहीं हिलता। और गो-हत्या हो रही है! जरूर उसका इरादा होगा हत्या करवाने का। नहीं तो कैसे पत्ता हिलेगा?

और कृष्ण से पूछो! कृष्ण तो कहते हैं, जिनको उसे मारना है वह मार ही चुका, अर्जुन, तू फिक्र मत कर। तू तो निमित्त मात्र है। ये तो मर ही चुके हैं, धक्का दे दे, गिर जाएंगे। तू सोच ही मत कि तूने मारा।

यही गीता तो ये कसाई पढ़े बैठे हैं। पहले तो इस गीता को बदलो, अगर तुम्हें गो-हत्या बंद करवानी है। और तुम मुझसे चाहते हो कि मैं भी गोपाल जैसा हो जाऊं, कृष्ण जैसा हो जाऊं, तब तुम मेरे शिष्य बनोगे!

और जनता में मेरा कोई रस नहीं है। मैं उन लोगों में से नहीं हूं जो जनता को जनार्दन मानते हैं। ये सब राजनैतिक चालबाजियां हैं जनता के फुसलाने की; उनसे मत इकट्ठे करने की चालबाजियां हैं। मैं तो अपने सत्य को, जो मैंने जाना है और जीया है, उसको कहना

चाहता हूं। और सिर्फ उनसे कहना चाहता हूं, जिनके पास इतनी प्रतिभा है कि समझ सकें। भीड़-भाड़ से मुझे कोई प्रयोजन नहीं है।

और चुनौती तुम दो और मैं गुजरात आऊं! और ऐसे मैं गुजरात आ ही रहा हूं, तो उसका विरोध क्या है फिर? फिर वही चुनौती भी निपट लेंगे। मैं गुजरात आ ही रहा हूं, बिलकुल ही आ रहा हूं, वहीं टिकूंगा। फिर तुम आ जाना मेरे कम्यून में और तुम्हें जो विवाद करना हो कर लेना।

मगर इस तरह के लोग क्या-क्या फिजूल की बातें करते हैं। क्या दलील निकाली उन्होंने, कि "जैसे दुखी और भूखी गायों की हालत है, वैसी ही भारत की साठ प्रतिशत जनता की है। तो क्या रजनीश जी के सिद्धांत के अनुसार गायों की तरह जनता की भी हत्या कर देनी चाहिए?' अगर यह दलील ठीक से लागू करनी हो, तब तो मच्छरों को भी नहीं मारना चाहिए, खटमलों को भी नहीं मारना चाहिए, चूहों को भी नहीं मारना चाहिए। और जब बीमारी हो जाए--टी. बी. हो जाए, मलेरिया हो जाए, तो इंजेक्शन नहीं लेने चाहिए, दवा नहीं खानी चाहिए, क्योंकि कीटाणु मरेंगे। सच तो यह है, श्वास ही नहीं लेनी चाहिए, शंभु महाराज! क्योंकि हर श्वास में कोई एक लाख जीवाणु मर जाते हैं। इससे बड़ा और क्या कसाईपन होगा? एक-एक श्वास में एक लाख जीवाणु मर जाते हैं। तुम्हारे शरीर में कोई सात अरब जीवाणु हैं और प्रतिदिन उन में से लाखों जीवाणु मर रहे हैं। वे ही तो तुम्हारे बाल और नाखून बन कर निकलते हैं। वे ही मल-मूत्र बनकर निकलते हैं। तुम दवा लेना बंद कर दो। दवाओं का विरोध करो, क्योंकि इससे जीवाणु मर जाते हैं। सांस का विरोध करो कि कोई सांस न ले, क्योंकि इससे जीवाणु मर जाते हैं। जीने का ही विरोध करो, क्योंकि कोई जीएगा तो कोई मरेगा।

मैं तो चंडीदास के वचन में भरोसा करता हूं--"साबार ऊपर मानुस सत्य, ताहार ऊपर नहीं।' सबसे ऊपर मनुष्य का सत्य है, उसके ऊपर कोई और सत्य नहीं। इसलिए अगर मनुष्य को बचाने की जरूरत हो, तो कीटाणुओं को भी मारना पड़े तो मारना पड़ेगा। अगर मनुष्य को बचाने की जरूरत हो, चूहों को मारना पड़े तो मारना पड़ेगा; खटमलों को मारना पड़े तो मारना पड़ेगा; मच्छरों को मारना पड़े तो मारना पड़ेगा। क्योंकि मनुष्य इस जगत इस जगत में चैतन्य का सबसे ऊंचा। आविष्कार है। निश्चित ही श्रेष्ठ को बचाने के लिए निकृष्ट को विदा करना होगा। हां, अगर निकृष्ट भी बच सकता हो श्रेष्ठ को बिना हानि पहुंचाए, तो मुझे कोई एतराज नहीं है।

भारत अकेला देश है जो गो-भक्त है। भारत भी पूरा नहीं, सिर्फ हिंदू। न ईसाई, न सिक्ख, न जैन, न मुसलमान, न पारसी--इन सब को छोड़ दो। सिर्फ हिंदू। और हिंदू ही सिर्फ भारत नहीं हैं, हिंदुओं की संख्या तो बीस करोड़ है, बाकी पचास करोड़ लोग और भी इस देश में हैं। यह हिंदुओं की धारणा को बाकी पचास करोड़ लोगों के ऊपर थोपने का किसको अधिकार है?

और विनोबा भावे ने जो अनशन किया था, उसको मैं हिंसा मानता हूं। वह जबरदस्ती है। वह हिंदुओं की जबरदस्ती है। फिर जिन्ना ठीक ही कहता था कि अगर भारत एक रहा, तो हिंदू जबरदस्ती करेंगे। वह जबरदस्ती दिखाई पड़ती है। फिर तो जिन्ना ठीक था और गांधी गलते थे। अच्छा किया उसने कि पाकिस्तान तोड़ लिया। फिर तो सिक्ख भी ठीक हैं, उनकी भी कहना चाहिए हमें ईसाइस्तान अलग कर दो। और जैनियों को अपना जैनिस्तान अलग कर लेना चाहिए। और पारसियों को कहना चाहिए--बंबई हमारी। फिर हिंदू अपनी गो-रक्षा करें, जो उनको करना हो! सब गौवों को ले जाएं और रक्षा करें, जो उन्हें करना है, करें!

यह देश सबका है, इसमें हिंदू धारणाओं को जबरदस्ती नहीं थोपा जा सकता। हिंदू धारणा थोपनी है, मगर बातें ऊंची कर रहे हैं। बातें अहिंसा की कर रहे हैं और हिंसा करने का आग्रह है। यह क्या विनोबा का अनशन करना कि मैं मर जाऊंगा अगर गो-हत्या पर निषेध नहीं लगाया गया? वह हिंसा की धमकी है। किसी को मारने की धमकी दो या मरने की धमकी दो, बात तो एक ही है। किसी की छाती पर छुरा रख दो या अपनी छाती पर छुरा रख लो और कहो कि मैं मर जाऊंगा--यह बात तो एक ही है, इसमें कुछ भेद नहीं हैं; इसमें कुछ अहिंसा नहीं है। यह शुद्ध हिंसा है और जबरदस्ती है। और एक आदमी जबरदस्ती करे और सारे देश पर अपने इरादे को थोप देना चाहे, यह कैसा लोकतंत्र है?

हिंदू को गऊ बचानी है, बचाएं! कौन मना करता है? कल मुसलमान कहने लगेंगे सबका खतना होना चाहिए। वे भी खतने के लिए आधार खोज सकते हैं। यहूदियों ने खोज लिए हैं, शंभु महाराज! यहूदियों ने किताबें लिखी हैं कि खतने के बड़े फायदे हैं। उन फायदों में एक फायदा उन्होंने यह गिनाया है कि जब व्यक्ति का खतना किया जाता है तो उसकी बुद्धि विकसित होती है। और उनके दावे हैं कि दुनिया में सब से ज्यादा नोबल प्राइज यहूदियों को मिलती है, क्यों? क्योंकि उनके खतने होते हैं। और खतना जल्दी करना चाहिए--जितनी जल्दी हो उतना फायदा। इसलिए मुसलमान का खतना तो जरा देर से होता है, उसको यहूदी नहीं मानते। यहूदी तो मानते हैं, बच्चा पैदा हो, जितनी जल्दी खतना हो उतना अच्छा। क्योंकि उसकी ऊर्जा जननेंद्रिय से हटकर एकदम मस्तिष्क में प्रवेश हो जाती है। क्योंकि जब उसकी जननेंद्रिय की चमड़ी काटी जाती है तो ऊर्जा एकदम सरक जाती है जननेंद्रिय से मस्तिष्क में और प्रतिभा पैदा हो जाती है।

अगर इस तरह की बेवकूफियों को एक-दूसरे पर थोपने का आग्रह शुरू हो जाए, तब तो बड़ी मुश्किल हो जाएगी।

गो-हत्या नहीं होनी चाहिए। क्यों? क्योंकि जीव-दया! तो मच्छर क्यों मारते हो? और यह कैसी जीव-दया है? दया करनी हो तो मच्छर पर करो, तो कुछ पता चले! क्योंकि गऊ का तो तुम शोषण करते हो। उसके बछड़ों के लिए तो दूध है, वह खुद पीते हो। और कहते हो कि गऊ-भक्त हूं मैं। गऊ को माता कहते हो और उसके असली बेटों को वंचित करते हे, उसके असली बेटों को भूखा मारते हो! शंभु महाराज दूध पी रहे हैं और नंदी महाराज भूखे बैठे हैं! और असली बेटा नंदी महाराज है, शंभु महाराज नहीं। नंदी महाराज बैठे देख रहे हैं

कि यह क्या हो रहा है! जरा नदियों से तो पूछो; तो वे कहेंगे कि बाबा, यह दूध हमारे लिए है! अगर तुम्हारी गऊ-भक्ति इतनी बड़ी है तो अपनी स्त्रियों का दूध बछड़ों को पिलाओ, तो समझ में आएगी गऊ-भक्ति है। यह कैसी गऊ-भक्ति कि दूध पी रहे हैं उनका, चूस रहे गऊओं को और बातें कर रहे गऊ-भक्ति की!

फिर तुम मच्छड़ों की भक्ति करो; मच्छड़-भक्त हो जाओ! क्योंकि मच्छड़ तुम्हारा खून चूसते हैं--तब पता चलेगा भक्ति का! लेट जाओ खाटों पर नंग-धड़ंग, चूसने दो मच्छरों को, खटमलों को पिलाओ खून और कहो कि ये...तब मैं कहूंगा कि यह भक्ति है क्योंकि भक्ति में कुछ तुम दो तो भक्ति है। यह कैसी भक्ति है कि उल्टा ले रहे हो!

गउओं से तो पूछो कि तुमने उनकी क्या गति कर दी है। सारी दुनिया में गउओं की हालत बेहतर है, भारत को छोड़कर। भारत अकेला देश है जहां गउओं की सबसे दयनीय दशा है। हड्डी-हड्डी हो रही है; मांस सूख गया है और लोग दूध खींचे जा रहे हैं, निचोड़े जा रहे हैं। निकलता भी नहीं कुछ दो पाव निकल आए तो बहुत सेर भर निकल आए तो गजब!

स्वीडन में एक गाय उतना दूध देती है जितना भारत में चालीस गायें देती हैं। और स्वीडन में कोई लोग गऊ-भक्त नहीं है। स्विटजरलैंड में कोई गऊ-भक्त नहीं हैं।

अब यहां मेरे पास संन्यासी हैं, सारी दुनिया से आए हुए। "विवेक' मुझसे बार-बार कहती है कि अगर आप एक दफा पश्चिम की गाय का दूध पी लें तो फिर गाय का दूध, भारत का दूध तो पीने जैसा ही नहीं है। न इसमें स्वाद है। क्योंकि वह मुझे कह रही थी कि हमने तो कभी सुना ही नहीं था पश्चिम में कि दूध में और शक्कर मिलायी जाती है। दूध खुद ही इतना मीठा होता है। उसमें शक्कर मिलाने की बात ही बेहूदी है और दूध इतना गाढ़ा होता है, इतना पौष्टिक होता है! और ये कोई गऊ-भक्त देश नहीं हैं! लेकिन कारण है उसका। उतनी ही गउएं बचाते हैं वे, जितनी गउओं को ठीक पोषण दिया जा सके, ठीक जीवन दिया जा सके, सुविधा दी जा सके।

तुम गउओं को क्या दे रहे हो? और तुम बातें दया की कर रहे हो! यह ज्यादा दयापूर्ण होगा कि ये मरती हुए गउओं को सड़कों पर सड़ने के बजाय, "पिंजड़ा पोलों' में सड़ने के बजाय मुक्त कर दो, इनकी सड़-गली देह से इनको मुक्त कर दो! यही मैंने कहा था। उससे, उनको अड़चन हो गयी है, बेचैनी हो गयी है। मैंने इतना ही कहा था कि भारत उतनी ही गऊएं बचा ले जितनी गऊएं बचा सकते हैं हम। जब ज्यादा बचा सकेंगे तो ज्यादा बचा लेंगे। यह दया का काम होगा।

लेकिन उन्होंने क्या तरकीब निकाली! उन्होंने यह तरकीब निकाली: "इसका तो मतलब यह हुआ कि भारत में फिर चालीस प्रतिशत लोगों को छोड़ कर साठ प्रतिशत तो दीन-हीन हैं, तो इनकी भी हत्या कर दी जाए?' मैं नहीं कहूंगा कि इनकी हत्या कर दी जाए। लेकिन अगर तुमको गऊएं बचानी हैं तो इनकी हत्या हो जाएगी। तुम इसके लिए जिम्मेवार होओगे। अगर भारत में थोड़ी वैज्ञानिक बुद्धि का उपयोग किया जाए तो भारत की साठ प्रतिशत जनता भी सुखी हो सकती हैं, आनंदित हो सकती है।

और अगर मेरी बात सुनी गयी और शंभु महाराज जैसे लोगों की बातें सुनी गयी, तो वह साठ प्रतिशत जनता--मैं तो नहीं कहता कि मारी जाए--लेकिन प्रकृति मार डालेगी। अकाल में मरेगी, भूख में मरेगी, बाढ़ में मरेगी, बीमारियों में मरेगी। इस सदी के अंत में तुम देख लेना, इस सदी के पूरे होते-होते भारत में दुनिया का सबसे बड़ा अकाल पड़ने वाला है। सारी दुनिया के वैज्ञानिक घोषणा कर रहे हैं। क्योंकि इस सदी के पूरे होते-होते भारत की संख्या चीन से आगे निकल जाएगी, एक अरब का आंकड़ा पार कर जाएगी। और एक अरब का आंकड़ा पार करते ही तुम्हारी हालत होगी! अभी ही तुम अधमरी हालत में हो, एक अरब का आंकड़ा पूरा हुआ कि भारत में महाभयंकर बीमारियां और अकाल फैलने वाला है। प्रकृति मारेगी। मुझे मारने की कोई जरूरत नहीं, मुझे कुछ कहने की जरूरत नहीं, परमात्मा मारेगा।

अगर उस घटना के पहले कुछ कर सकते हो, तो समझने की कोशिश करो। भारत के मन को व्यर्थ की उलझनों में उलझाओ! कि गऊ-हत्या बचानी है, और शराबबंदी करवानी है, और चरखा चलवाना है; इन पागलपन की बातों में न उलझो! बड़े उद्योग बनाओ। विज्ञान ने पूरे साधन खोज दिये हैं, उन साधनों को लाओ। चरखे में मत अटके रहो। उतनी ही गऊएं बचा लो जितनी तुम अभी बचा सकते हो। हां, कल जब हम ज्यादा बचा सकेंगे तो ज्यादा बचाएंगे। पहले आदमी को बचाओ, फिर दूसरी बात है। साबार ऊपर मानुस सत्य, ताहार ऊपर नाहीं। सबसे ऊपर मनुष्य का सत्य है, उसके ऊपर कुछ भी नहीं। अगर मनुष्य को बचाने के लिए और सब भी नष्ट करना पड़े तो मैं करने को तैयार हूं। लेकिन मनुष्य को बचाना जरूरी है। क्योंकि मनुष्य बच जाए तो शेष सबको फिर से पुनरुज्जीवित किया जा सकता है। लेकिन अगर मनुष्य मर जाए, तो कौन तुम्हारी गऊएं बचाएगा और कौन तुम्हारी भैंस बचाएगा? और कौन तुम्हारी धर्म और संस्कृति और महानतम बातों को बचाएगा? कौन तुम्हारे वेद, उपनिषद, गुरुग्रंथ को बचाएगा? ये पागलपन की बातें छोड़ो। ये पागलपन की बातों को मैं सीधा पागलपन की बातें कह देता हूं, इससे उनको एकदम आग लग जाती है!

फिर झूठ बोलने में भी इन लोगों को कोई लाज-शर्म नहीं! अब यह बात सरासर झूठ है। मैंने तीन महीने के पहले तो कभी शंभु महाराज का नाम ही नहीं सुना था। यह तीन महीने में ही नाम सुना, क्योंकि वे मेरे कच्छ आने का विरोध करने लगे, तो मुझे पता चला कि यह सज्जन भी कहीं हैं। नहीं तो मैंने इनका कभी नाम ही नहीं सुना था। और जिन अतुलानंद का उन्होंने नाम लिया है, यह तो पहली दफे मैंने सुना है--उनके वक्तव्य में। मुझे कभी कोई निमंत्रण नहीं मिला अतुलानंद या शंभु महाराज की तरफ से अहमदाबाद में। और यह बिलकुल सरासर झूठ बात कह रहे हैं कि "अतुलानंद की अगवानी में साधु-संत इकट्ठे हुए थे और उन्होंने आपको चर्चा करने के लिए आमंत्रण दिया, तब आप चर्चा के लिए क्यों नहीं, आए थे?' न मुझे कभी आमंत्रण मिला। मैंने इनका नाम ही नहीं सुना इन लोगों का। लेकिन झूठ भी बोलने में इन तथाकथित धार्मिक आदमियों को कुछ भी नहीं लगता।

"इसलिए शंभु महाराज का कहना है कि रजनीश जी में ज्ञान का घमंड होने के कारण पागलपन दिखायी पड़ता है।' ज्ञान तो मुझमें है ही नहीं, घमंड कैसे होगा? मैं तो महा अज्ञानी हूं। तब तो देखो ऐसी-ऐसी अज्ञान की बातें कर पाता हूं! कोई ज्ञानी कहेगा? शंभु महाराज कहें! मोरारजी देसाई कहें! ये कौन हैं श्री अतुलानंद, ये कहें! करपात्री महाराज कहें! पुरी के शंकराचार्य कहें! कोई ज्ञानी कहे तो! मैं तो अज्ञानी हूं, इसलिए ऐसी बातें कह पाता हूं।

ज्ञान के घमंड को तो कोई सवाल ही नहीं उठता। मैंने तो ज्ञान को कचरा समझ कर छोड़ दिया। अब क्या उसका घमंड मरूंगा? कचरे का कोई घमंड करता है! मैं तो महा अज्ञानी हूं, जैसे सुकरात ने कहा कि मैं इतना ही जानता हूं कि कुछ भी नहीं जानता। बस इतना ही मैं भी जानता हूं कि कुछ भी नहीं जानता। इसीलिए तो जी खोल कर जो दिल में आता है, कहता हूं। अरे, जब कुछ जानता ही नहीं हूं तो अब अड़चन क्या है!

और तुमने उपनिषद का वचन देखा अभी? "जिसने स्वयं को जान लिया, उसके लिए फिर न कुछ ठीक है, न कुछ गलत हैं' मुझे भी कुछ न ठीक है न गलत है। मैं हूं ही नहीं तो कौन पश्चात्ताप करे? कौन फिक्र करे? परमात्मा को जो बोलना हो, बुलवा ले; जो करना हो, करवा ले; जहां उलझाना हो, उलझा दे। मैं तो गया--जमाना हो गया तब से गया! अब कौन है यहां घमंड करने को?

और वे कहते हैं कि राजा रावण का भी ज्ञान के घमंड के कारण सर्वनाश हुआ था। मेरा तो सर्वनाश हो चुका! अब क्या होगा! मैं तो उस दिन मर गया जिस दिन अहंकार मरा। उस दिन के बाद तो परमात्मा है; अगर सर्वनाश उसका ही होना हो, वह जाने! उस दिन के बाद में हूं नहीं। पच्चीस साल हो गये मुझे मरे हुए। अब तो मैं सिर्फ बांस की पोंगरी हूं, जो गीत उसे गाना हो गा ले। फिल्मी धुन बजानी हो, फिल्मी बजाए; और भगवदगीता गानी हो, भगवदगीता गाए; मैं कौन हूं जो बीच में बाधा दूं? मैं तो जा चुका।

और राजा रावण का किसलिए हुआ था सर्वनाश, मुझे कुछ पता नहीं। मैं कोई ज्ञानी होता तो पता होता। अज्ञान की कहो तो कुछ बातें कह दूं! राजा रावण का सर्वनाश इसलिए हुआ--गद्दार विभीषण के कारण। और किसी कारण नहीं। और चूंकि राम उस गद्दार के कारण जीते, उस गद्दार को उन्होंने पुरस्कार भी खूब दिया। लंका का पूरा राज्य दे दिया। और तुम देखते हो, ये राम के भक्तों में से एक ने भी नहीं कहा कि विभीषण ने गद्दारी की। अपने भाई को धोखा दिया। इससे बड़ा गद्दार दुनिया में दूसरा नहीं हुआ। अगर रावण जीत गया होता तो विभीषण की निंदा सदियों तक होती। लेकिन चूंकि राम जीत गये--उसकी गद्दारी के कारण जीते; क्योंकि जब भाई ने ही सूत्र दे दिये, राज बता दिया, तो रावण की हार सुनिश्चित थी।

और रावण अहंकारी नहीं था। यह भ्रांति भी छोड़ दो। यह ख्याल गलत है! रावण के साथ धोखा राम ने किया। क्योंकि जब सीता का स्वयंवर रचा जा रहा था, तो यह बात जाहिर थी कि रावण इतना शक्तिशाली है कि वह सीता को ले जाएगा। और वह शिव का भक्त था और

शिव का धनुष तोड़ना था। वह उसका हकदार था वहां शुरू होती है, बेईमानी वहां शुरू होती है, राजनीति वहां शुरू होती है।...इसमें राम जिम्मेवार हैं इस सारे उपद्रव में, रावण नहीं। चालबाजी यह की गयी कि झूठी खबर दी गयी उसे कि रावण, तेरी लंका में आग लग गयी है। तुझे जल्दी बुलावा आया है। तू भाग! तेरी लंका जल रही है, सोने की लंका जल रही है। रावण भागा। अब जब लंका में आग लगी हो तो कोई स्वयंवर में रुका रहे! कोई विवाह के लिए तैयार करे! वह कोई समय है? वह भागा लंका गया। यह झूठ थी बात। लंका में आग नहीं लगी थी। जब तक वह लौटा, तब तक स्वयंवर समाप्त हो चुका था। तब तक राम ने सीता को वरण कर लिया था। इसका ही बदला देने के लिए--और इसका बदला देना जरूरी था, क्योंकि यह बेईमानी की गयी थी, यह सीधा षडयंत्र था--इसका बदला देने के लिए उसने सीता को चुराया। मगर सीता के साथ उसने जो सदव्यवहार किया, वह राम ने भी कभी नहीं किया। सीता को तीन साल तक कारागृह में रख कर भी उसने सारी सुविधाएं दी थीं। जंगल में नहीं रख दिया था, किसी जेलखाने में नहीं बंद कर दिया था, उसके पास सुंदरतम वाटिका थी--सुंदरतम बगीचा था अशोकवाटिका, वहां रखा था। और उसने कभी भी कोई जबरदस्ती नहीं की, कोई बलात्कार नहीं किया। सीता को छुआ भी नहीं, स्पर्श भी नहीं किया। तो वह आदमी अपने किस्म का प्रामाणिक आदमी था, ईमानदार आदमी था। और राम से बदला लेना था, सीता से क्या बदला लेना था! सीता का तो कोई कसूर था नहीं। इसलिए सीता को उसने कोई परेशानी नहीं दी।

राम ने सीता के साथ दर्ुव्यवहार किया। पहले तो उसकी अग्नि-परीक्षा ली। जिस पति को अपनी पत्नी पर संदेह है, उसको प्रेम नहीं। संदेह तो तभी उठता है जब प्रेम न हो। जहां प्रेम है वहां कैसा संदेह? जहां प्रेम है वहां भरोसा है, श्रद्धा है, आदर है, सम्मान है। पहला तो अपमान यह किया कि सीता की अग्नि-परीक्षा ली।

और बेईमानी देखो।

खुद भी अग्नि-परीक्षा दे देनी थी, तो भी समझ में आता; तो दोहरे मापदंड न हो पाते। क्योंकि तुम भी तीन साल अलग रहे थे। और ऐसे शोधकर्ता हैं, जिनका कहना है कि राम का शबरी से प्रेम था। तुम शोधकर्ताओं की किताबें खोज कर देखो। रामलीला में तुमने शबरी को देखा होगा, वह झूठ है बात कि शबरी हमेशा बूढ़ी औरत दिखायी जाती है। वह सिर्फ बताने के लिए बुढ़ापा दिखाया जाता है। उसका। शबरी जवान स्त्री थी। और जंगल की सुंदरतम स्त्री थी।

प्रोफेसर नावलेकर ने एक अदभुत किताब लिखी है--"न्यू एप्रोच टू रामायणा।' रामायण के प्रति एक नया दृष्टिकोण। और उसमें उन्होंने सिद्ध करने की कोशिश की है कि शबरी जवान थी, सुंदर थी--अतिसुंदर थी और राम उसके प्रेम में थे। असल में प्रेम ही एक-दूसरे की झूठी चीजें खा सकते हैं। और कोई खा भी नहीं सकता। तुम जरा किसी की झूठी चीज तो खाओ! कोई ऐसा बेर काट कर मुंह में तुमको दे, तुम एकदम थ-थ कर दोगे कि पागल हो गये हो

तुम? वह तो प्रेम के पागलपन में चल जाता है। प्रेम के पागलपन में क्या नहीं चल जाता! प्रेयसी अगर जूठा करके दे दे तो अहा, अमृत है! हालांकि थूक कोई अमृत नहीं होता।

शबरी से राम का प्रेम था, यह नावलेकर ने सिद्ध करने की कोशिश की है। और मजबूत दलीलें दी हैं।

तो राम को भी परीक्षा दे देनी थी। दोनों साथ ही गुजर जाते अग्नि-परीक्षा से। और मेरा मानना है कि अगर अग्नि-परीक्षा से दोनों गुजरते, तो राम जलते, सीता बाहर निकलती। सीता। तो बाहर निकली ही। मगर शक फिर भी न गया। और स्त्री के प्रति अपमान फिर भी न गया। और फिर भी सीता को किसी धोबी के कहने पर वनवास दे दिया।

रावण ने जो दर्ुव्यवहार नहीं किया था, वह राम ने किया है।

अब मैं किस जनता को समझाने जाऊं, तुम थोड़ा सोचो! और मेरी बात तुम्हारी भीड़ को समझ में पड़ेगी? सुन सकेंगे वे? उनकी आंखें अंधी हैं पक्षपातों से। वे पुनर्विचार कर सकेंगे शांतिपूर्वक?

रावण में मुझे कोई भ्रांति नहीं दिखायी पड़ती, कोई भूल नहीं दिखाई पड़ती। रावण बहुत सीधा-साधा आदमी है। राम मुझे चालबाज दिखाई पड़ते हैं। और राम के जो वशिष्ठ वगैरह, ऋषि-मुनि जिनको तुम कहते हो, वे सब एजेंट थे। जैसे ईसाई मिशनरी एजेंट होते हैं न। नाम तो लेते हैं बाइबिल का, आते हैं इरादा कुछ और रख कर। वे राम के एजेंट थे। वे जो ऋषि-मुनि दक्षिण में जाकर उपद्रव खड़ा कर रहे थे। उन्हीं एजेंट को बचाने के लिए सारा आयोजन किया गया था।

और इस गद्दार विभीषण को सम्मान देना, और इसको वापिस राज्य दे देना--गद्दारी का सम्मान हो गया, धोखेधड़ी का सम्मान हो गया। और सीता जैसी निष्कलुष स्त्री को, गर्भवती स्त्री को जंगल में छुड़वा देना, बिना कहें कि कहां भेजा जा रहा है उसे--यह स्त्री-जाति का बड़ा से बड़ा अपमान हो गया।

और राम ने शंबूक नाम के शूद्र के कानों में सीसा पिघलवा कर भरवा दिया था, क्योंकि उसने वेद के मंत्र सुन लिए थे।

मैं राम को भगवान का अवतार नहीं मान सकता हूं। क्योंकि भगवान के अवतार को क्या शूद्र और क्या ब्राह्मण? भगवान के अवतार को इतनी भी दृष्टि नहीं है कि वह देख सके कि सीता पवित्र है! इतनी भी दृष्टि नहीं है कि देख सके कि धोबी गलत है। और अगर यह भी था कि धोबी ने जो बातें कही थी, हो सकता है वह और लोग भी कह रहे हो, तो फिर खुद भी राज्य छोड़ देना था। तो चले जाते वे भी सीता के साथ जंगल में। भी चौदह साल रहने के अभ्यासी थे, कोई नयी बात थी नहीं। फिर जंगल में साथ ही चले जाते। लेकिन राज्य को तो बचा लिया, पत्नी को छोड़ दिया। पद को बचा लिया, पत्नी को छोड़ दिया। पद प्रेम से बड़ा साबित हुआ।

राम राजनैतिक पुरुष है। मेरे लिए कोई धार्मिकता उनमें दिखायी नहीं पड़ती।

"और उन्होंने कहा कि जिसका पतन होने वाला होता है, उसे ऐसी ही दुर्बुद्धि घेर लेती है।' मैं तो हूं ही नहीं तो पतन क्या होगा? मैं तो हूं ही नहीं, दुर्बुद्धि क्या घेरेगी?

और आना हो शंभु महाराज को तो स्वागत है! लेकिन यहां आना होगा। मैं तो कहीं आता-जाता नहीं हूं। मुझे कोई रस नहीं है--न शंभु महाराज में, न गठओं में। मैं कोई गो-भक्त नहीं हूं, और न मैं गोपाल होने के लिए उत्सुक हूं। मैं तो अपने होने से पूरी तरह राजी हूं--जैसा हूं, परम आनंदित हूं।

आज इतना ही।

१० अक्तूबर १९८०; श्री रजनीश आश्रम, पूना